शिवलिङ्ग पूजा क्यों?
आचार्य डॉ० श्रीराम आर्य

प्राक्कथन

इस ग्रन्थ को लिखने का हमारा प्रयोजन किसी सम्प्रदाय विशेष पर चोट करना अथवा किसी का दिल दु:खाना नहीं है, और न हम इस ग्रन्थ को किसी प्रकार की साम्प्रदायिक कटुता को उत्पन्न करने के उद्देश्य से प्रकाशित कर रहे हैं। वरन् हमारा लक्ष्य अपने हिन्दू समाज में वर्तमान धार्मिक कुरीतियों व अन्धविश्वासों के प्रति अपने समाज को सजग करना है ताकि हमारे सहधर्मी लोग यह देख व समझ सकें कि किस प्रकार हमारे धर्माचार्य वर्ग ने हिन्दू समाज की धार्मिक भावनाओं के साथ खिलवाड़ किया है। उस ईश्वर के स्थान पर नर व नारी की जननेन्द्रियों की पूजा का भक्त बनाकर कुमार्गगामी बनाया है। उसके धार्मिक अन्धविश्वास के कारण मानव जीवन के पवित्र उद्देश्य ईश्वर-प्राप्ति के लक्ष्य से उसे विमुख बनाकर उसके जीवन को बर्बाद किया है। आज जबकि स्वतन्त्र भारत में हमारी राष्ट्रीय सरकार भौतिक दृष्टि से देश के उत्थान में प्रयत्नशील है। बुद्धिमान् व्यक्ति सामाजिक दोषों को दूर करने में अहर्निश प्रयत्नशील हैं तो यह अत्यन्त आवश्यक है कि हमारे समाज में से धार्मिक दोष भी दूर हो जाएँ और जनता धर्म के सही मर्म को समझ सके। दोषों को दूर करने के लिए उनको खोलकर जनता के सामने रखना परम आवश्यक होता है ताकि जनता की चेतना-शक्ति जागृत हो व बुराइयों को लोग समझकर उनसे घृणा करने लगें। जब तक दोषों पर डटकर प्रहार नहीं किया जायेगा व बुराइयों से जनता को अवगत नहीं कराया जायेगा, तब तक अन्धविश्वासों का विनाश नहीं होगा। रोगों को दूर करना ही खण्डन कहाता है। रोग दूर हो जाने पर ही स्वास्थ्यवर्धक औषधि का रोग-मुक्त शरीर पर प्रभाव होता है, यह चिकित्साशास्त्र का अटल सिद्धान्त है। पाखण्ड का खण्डन एवं सत्य बात का मण्डन करना यह मानव धर्म है। जो अज्ञानतावश पाखण्ड खण्डन को बुरा कहते हैं, वे चिकित्सा के मर्म को नहीं समझते हैं।

शिवलिङ्ग पूजा वास्तव में शङ्कर व पार्वती के गुप्ताङ्गों की पूजा है, यह हमने दर्जनों प्रमाणों के आधार पर इस ग्रन्थ में सिद्ध

किया है। जिनका खण्डन पुराणों का मानने वाला कोई भी पौराणिक विद्वान् नहीं कर सकता है। हिन्दू समाज के परम पूज्य फर्जी देवता शङ्कर के पतित जीवन की चन्द झाँकियाँ आपको इसमें मिलेंगी और उनको पढ़कर आप देखेंगे कि क्या ऐसे गन्दे चरित्र वाले व्यक्ति की उपासना से किसी व्यक्ति या समाज का उत्थान हो सकता है। आज बाजार में शङ्कर व पार्वती, कृष्ण, विष्णु आदि के कामोत्पादक सिनेमा स्टाइल के दूषित चित्र छाप-छाप कर बाँटे व बेचे जा रहे हैं। शिवभक्तों को ही नहीं वरन् हमारे सम्पूर्ण हिन्दू (सनातन धर्मी) समाज के लिए चुनौती पेश करते हैं कि क्या हमारी सनातन धर्मसभाएँ या पौराणिक पण्डितगण नशे में सो रहे हैं, जो इनके प्रकाशन के विरुद्ध कोई आन्दोलन नहीं करते हैं। हमें कहना है कि हमारी इस पुस्तक को पढ़कर यदि किसी हमारे पौराणिक बन्धु को कुछ अप्रिय लगे तो वे उन अश्लील पुराणों को जब्त कराने का उद्योग करें, जिनके प्रमाणों के आधार पर इस ग्रन्थ की रचना हुई है। सनातन धर्म सभाएँ परम पूज्य अपने फर्जी देवताओं के अश्लील चित्र छापने वाली फर्मों के विरुद्ध आन्दोलन करें, योनि लिङ्गपूजा के गन्दे स्थान शिव-मन्दिरों को समाप्त करा दें। जगन्नाथपुरी आदि के मन्दिरों को ठीक कराएँ, जहाँ खुले व्यभिचार के नग्न चित्र सनातन धर्म के वाममार्गीय स्वरूप का प्रमाण उपस्थित करते हैं, हमारा यह ग्रन्थ पौराणिक जनता की आँखें खोलकर उसे हमारे प्राचीन धर्म में प्रचलित एक भयङ्कर भूल से सावधान करने का कार्य करेगा। अतः इसका अधिक से अधिक प्रचार होना आवश्यक है, देश में खण्डन-मण्डन का कार्य बन्द हो जाने से सर्वत्र ही आजकल धार्मिक क्षेत्रों में पाखण्डों का प्रचार तेजी से हो रहा है। आर्यसमाज के विद्वानों से हमें कहना है कि वे आर्यसमाज की पवित्र वेदी पर से मत-मतान्तरों के पाखण्डों के खण्डन व वैदिक सिद्धान्तों के मण्डन में लेखों व व्याख्यानों का अजेय प्रवाह पुनः पूर्ववत् जारी करें, जिसके लिए महर्षि ने समाज की स्थापना की थी। आर्य विद्वानों को अपने कर्तव्य के प्रति सजग रहना चाहिए। आशा है पाठक हमारे इस प्रयास (ग्रन्थ) का स्वागत करेंगे।

—निवेदक

डॉ० श्रीराम आर्य

एक ईश्वर के अनेक नाम हैं

पौराणिक (सनातन) धर्म में ब्रह्मा, विष्णु व महादेव तीन प्रमुख उपास्य देवता माने जाते हैं। कुछ पुराणों में कहीं-कहीं इन तीनों को एक ही माना है।

ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव तीनों नाम एक ही ईश्वर के हैं।

गुणमय्या स्वशक्त्यास्य सर्गस्थित्यप्ययान्विभो।
धत्से यदा स्वदृग्भूमन् ब्रह्मविष्णुशिवाभिधाम्॥ २३॥

—भागवत स्क० ८। अ० ७

अर्थ—प्रभो! अपनी गुणमयी शक्ति से इस जगत् की सृष्टि, स्थिति और प्रलय करने के लिए आप एकरस अनन्त होने पर भी ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि नाम धारण कर लेते हैं।

सृष्टिस्थित्यन्तकरणी ब्रह्मविष्णुशिवात्मिकाम्।
स संज्ञां याति भगवान् एक एव जनार्दनः॥ ६६॥

—विष्णुपुराण प्र० अंश अ० २

अर्थ—वह एक ही भगवान् जनार्दन जगत् की सृष्टि, स्थिति और प्रलय करने के लिए ब्रह्मा, विष्णु, शिव इन तीनों नामों को धारण कर लेते हैं।

इससे प्रकट होता है कि ये तीनों नाम एक सर्वव्यापक जगदाधार ब्रह्म के ही हैं। इन तीनों देवताओं का पृथक्-पृथक् कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है। वैदिक साहित्य में एक ईश्वर को उसके गुण एवं कार्यों की अपेक्षा से अनेक नामों से पुकारा गया है।

तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः।
तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म ताः आपः सः प्रजापतिः॥ १॥

—यजु० अ० ३२

सोमं राजानं वरुणमग्निमन्वारभामहे।
आदित्यं विष्णुं सूर्यं ब्रह्माणं च बृहस्पतिम्॥

—सामवेद पूर्व० १-२

स ब्रह्मा स विष्णुः स रुद्रस्सऽशिवस्सोऽक्षरस्सपरमः स्वराट्।
स इन्द्रस्स कालाग्निस्स चन्द्रमाः॥ —कैवल्योपनिषद्

अर्थात्—आदित्य, वायु, चन्द्रमा, शुक्र, ब्रह्म, आपः, प्रजापति, सोम, राजा, वरुण, इन्द्र, कालाग्नि, रुद्र, शिव, ओम्, स्वराट्, विष्णु, सूर्यादि नाम ईश्वर के हैं। जगत् का उत्पन्नकर्त्ता होने से ब्रह्मा, पालक होने से ईश्वर विष्णु हैं, कल्याणकारी होने से शिव नाम परमात्मा का है। महर्षि दयानन्द जी महाराज ने जगत्प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में प्रथम समुल्लास में ईश्वर के १०० नामों की व्याख्या में ये सभी नाम परमात्मा के सिद्ध किये हैं, परन्तु पौराणिक साहित्य में भागवत व विष्णुपुराण की एवं वेदों व उपनिषदों की उपरोक्त मान्यता के विपरीत वर्णन मिलता है, जिसमें इन सभी देवताओं का पृथक्-पृथक् अस्तित्व माना है और एक दूसरे की निन्दा की है।

महादेवजी ब्रह्माजी के बेटे थे

नरसिंह जी ने जो साक्षात् विष्णु के अवतार थे, कहा है—

मन्नाभिपङ्कजाज्जातः पुरा ब्रह्मा चतुर्मुखः।
तल्ललाटसमुत्पन्नो भगवान् वृषभध्वजः॥ ३१॥

—लिङ्गपुराण पूर्वार्ध अ० ९६

अर्थ—मेरी नाभि से कमल पैदा हुआ, उस कमल में से ब्रह्मा पैदा हुए। उन ब्रह्मा के माथे से शङ्कर जी का जन्म हुआ है।

इसके विपरीत अन्य स्थानों पर इसी पुराण में लिखा है कि—

विष्णु व ब्रह्मा महादेवजी के बेटे थे

अयं मे दक्षिणे पार्श्वे ब्रह्मा लोकपितामहः॥ २॥
वामपार्श्वे च मे विष्णुर्विश्वात्मा हृदयोद्भवः॥ ३॥

—लिङ्गपुराण १९

अर्थ—महादेव जी कहते हैं कि मेरे दाहिने पार्श्व से लोक पितामह ब्रह्मा जी तथा बाँए पार्श्व (पसली) से विश्व के आत्मस्वरूप हृदयोद्भव विष्णु जी पैदा हुए हैं।

एक प्रमाण और भी देखिए—

ब्रह्मा, विष्णु व महादेव को एक मानने वाले नरकगामी होंगे—

विष्णुब्रह्मादिरूपाणामैक्यं जानन्ति ये मानवाः।
ते यान्ति नरकं घोरं पुनरावृत्तिवर्जितम्॥

—गरुडपु० ब्रह्मकाण्ड अ० ४

अर्थ—जो लोग ब्रह्मा, विष्णु व महादेव को एक ही मानते हैं वे मरकर घोर नरक में जाते हैं। उनका पुनर्जन्म भी नहीं होता है।

गरुड पुराण के श्लोक को पढ़कर वे लोग अपनी आँखें खोल लें जो तीनों देवताओं को कुछ पुराणों के आधार पर एक ही बता दिया करते हैं। यदि गरुड पुराण की यह बात सच है, तब तो भागवत व विष्णुपुराण बनाने वालों को घोर नरक मिला होगा, क्योंकि उन्होंने तीनों देवताओं को एक ही लिख दिया है।

इन चन्द उद्धरणों को देने से हमारा तात्पर्य यह है कि वैदिक साहित्य में ब्रह्मा, विष्णु व महादेव को एक ही ईश्वर के भिन्न-भिन्न नाम माना है और भागवत व विष्णुपुराण ने भी किसी-किसी स्थल पर चाहे इन तीनों देवताओं को एक ही स्वीकार किया है, किन्तु अन्य पुराणों ने इन तीनों देवताओं का अस्तित्व पृथक्-पृथक् ही माना है। हमें इससे कोई सरोकार नहीं कि इन तीनों में कौन किसका बाप है और किसका बेटा है। यह देखना तो हमारे पौराणिक बन्धुओं के अपने घर की बात है। इस लेख में हमें ब्रह्मा व विष्णु के सम्बन्ध में भी विचार नहीं करना है। हम आज अपने पाठकों को इन के सम्बन्ध में वास्तविक स्थिति में जानकारी कराना चाहते हैं। हमारे देश की धर्मपरायण हिन्दू जनता में करोड़ों की संख्या में शिव के भक्त भरे पड़े हैं। कहा जाता है कि शिवजी सपेरों के समान गले में साँपों को पहने रहते हैं। समुद्र-मन्थन के बाद वे जहर को पी गये और वह उनके गले में रखा है, इससे वह नीलकण्ठ कहलाये।

उन्होंने सती से विवाह किया। उसके मरने पर वे उसकी लाश को कन्धे पर डालकर शोक में दिवाने हुए सर्वत्र भागते फिरे। विष्णु ने छिप-छिप कर लाश के अनेक टुकड़े कर दिए, वे टुकड़े जहाँ-जहाँ पृथिवी पर गिरे वहाँ-वहाँ तीर्थ बन गए। इसी दीवानेपन में उन्होंने जो नाच किया, वही शिव का ताण्डव-नृत्य कहलाया। इसके बाद उन्होंने हिमालय राज की पुत्री पार्वती से विवाह किया। कामदेव को भस्म कर दिया। शिवजी के मस्तक से गङ्गाजी निकली हैं। दौज का चन्द्रमा शिवजी के सर पर निवास करता है। इत्यादि अनेक प्रकार की गाथाएँ उनके बारे में प्रसिद्ध हैं, इन्हीं कारनामों से प्रभावित होकर शिव के भक्त उनकी पूजा करते हैं। सौर पुराण में तो शिव के बारे में यहाँ तक लिखा है।

पुराण में शिव की महानता का वर्णन

शिवं सामान्यवक्तारं शिवं सामान्यदर्शिनम्।
दृष्ट्वा स्नायात् सचैलं सन् शिवं सामान्यसङ्गिनम्॥
महेशस्यैव दासोऽयं विष्णुस्तेनानुकम्पितः।
श्रुतिस्मृतिपुराणानां सिद्धान्तोऽयं यथार्थतः॥
इन्द्रोपेन्द्रादयः सर्वे महेशस्यैव किङ्कराः॥
तेन तुल्यो यदा विष्णुर्ब्रह्मा वा यदि गद्यते।
षष्टिवर्षसहस्राणि विष्ठायां जायते कृमिः॥

—सौरपुराण अ० ४०

अर्थ—जो मनुष्य शिवजी के समान विष्णु को देखता है व शिव के समान ब्रह्मा आदि देवताओं को बताता है, वह पापी है। उसे देख कर कपड़ों सहित स्नान करना चाहिए। विष्णु शिवजी का दास है, यह श्रुति, स्मृति, पुराणों का सिद्धान्त है। इन्द्रादि सभी देवता शिवजी के नौकर हैं। जो मनुष्य विष्णु ब्रह्मा आदि को शिवजी के समान कहता है, वह ६० हजार साल तक मर कर पाखाने का कीड़ा बनेगा।

शिवजी की श्रेष्ठता प्रकट करने व अन्य सभी देवताओं की तुच्छता दिखाने के लिए कितने प्रबल शब्दों का प्रयोग किया गया है, वे पाठक ऊपर के प्रमाण में देखें। तीनों देवताओं को एक ही बताने वाले हमारे पौराणिक भाई भी अब कभी आगे मुँह खोलने का साहस न करें, वर्ना उन्हें पाखाने का कीड़ा बनना पड़ेगा। अस्तु—

ऐसे महान् पौराणिक देवता की ऐसी प्रशंसा देखकर प्रत्येक समझदार व्यक्ति के हृदय में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि जब पौराणिक शास्त्रों में शिवजी की पूजा का विधान किया गया तो अन्य देवताओं के समान उनके सर, धड़ या पैरों की पूजा छोड़कर उनकी उपस्थेन्द्रिय शिवलिङ्ग को ही क्यों पूजा जाता है? अन्य देवताओं की अपेक्षा शिवलिङ्ग में ही क्या विशेषता है, जो सारा शिवोपासक सनातनी संसार उसकी उपासना में तल्लीन है, जबकि मूत्रेन्द्रिय किसी की भी पूजना या छूना संसार में कोई शराफत की बात नहीं है।

वास्तविक बात तो यह है कि महाभारत के युद्ध के बाद जब नाना प्रकार के मतों, पन्थों का प्रादुर्भाव हुआ, एक ईश्वर के स्थान

पर बहु देवतावाद की मान्यता व उनकी उपासना का प्रचार हुआ, स्वार्थवश ब्राह्मण वर्ग ने अशिक्षित जनता को धर्म के नाम पर नाना प्रकार के ढोंग रच कर लूटना खाना प्रारम्भ किया तो देश में दुराचारी लोगों के द्वारा एक शिश्नोपासक (मूत्रेन्द्रिय की उपासना करने वाले) वाममार्गीय सम्प्रदाय का प्रसार हुआ। वैदिक आदेश के सर्वथा विपरीत व्यभिचार को ही अपना आदर्श मानने वाले, मद्य-मांस मैथुन में रत रहने वाले इस वाममार्गीय सम्प्रदाय ने शिव नाम के फर्जी देवता की कल्पना की, उसके नाम पर नाना प्रकार की मिथ्या कथाएँ गढ़ीं और तत्सम्बन्धी लिङ्ग-शिव आदि पुराणों की रचना कर डाली। संस्कृत भाषा का उस समय देश में पण्डित वर्ग में प्रचार था, अतः शास्त्रों के नाम पर छन्दोबद्ध पुराणादि ग्रन्थों को बनाने में कठिनाई नहीं हुई। वैष्णवों ने विष्णु की प्रशंसा में पुराण बनाये तो शैवों ने शिव की प्रशंसा में अपनी मान्यता के आधार पर साहित्य तैयार कर दिया। अन्धविश्वासी देश की जनता ने उनका अन्धानुकरण प्रारम्भ कर दिया और यह अन्धपरम्परा अब तक देश में बहु देवतावाद की पूजा के रूप में चली आ रही है। कोई भी आँख खोलकर यह नहीं देखता कि शिवलिङ्ग को पूजना धर्म है या पाप, उस पर जल चढ़ाना उचित है या अनुचित। जहाँ देखो शिवलिङ्ग पूजने को मन्दिर खड़े हैं, और स्त्री-पुरुष धुआँधार उस पर सर पटकते रहते हैं।

आज हमें अपने पाठकों को सनातन धर्म के ही मान्य शास्त्रों से शिवलिङ्ग पूजा का सम्पूर्ण रहस्य बताना है। हमारा उद्देश्य किसी के दिल को दुःखाना नहीं है। वरन् अपनी वैदिक धर्मी जनता में से मूत्रेन्द्रिय की पूजा के इस गन्दे आडम्बर को भ्रष्टाचार से दूर करना है और धर्म परायण अपनी हिन्दू जनता को यह तथ्य बताना है कि ईश्वर के स्थान पर हमारे स्वार्थी अन्धविश्वासी धर्माचारियों ने क्यों नारी के गुप्ताङ्ग सहित शिवलिङ्ग की पूजा जारी कराई है। पौराणिक साहित्य के स्वाध्याय से हम इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि भारत के दक्षिण प्रदेश में सर्वप्रथम वाममार्ग का उदय हुआ था। मद्य, मांस व मैथुन उनके सम्प्रदाय का मूल आधार था। उन्होंने अपने देवता शिव की उपस्थेन्द्रिय की पूजा को अपने व्यभिचार प्रधान धर्म के प्रचार का साधन बनाया था।

वाममार्ग का भैरवी चक्र

वाममार्गीय सम्प्रदाय का प्रचार आज भी बिहार, बङ्गाल, आसाम व उड़ीसा प्रदेशों में पाया जाता है। इनके सामूहिक

कार्यक्रम बन्द स्थानों में होते हैं, जिनमें इसके सम्प्रदाय के अतिरिक्त अन्य व्यक्तियों को प्रविष्ट नहीं किया जाता है। बहुत बड़े कमरे में इनका कार्यक्रम होता है। सभी सदस्य मयजोड़े के उसमें भाग लेते हैं। बिना स्त्री वाले को शामिल नहीं करते हैं। सर्वप्रथम मध्य में एक वेदी बनाई जाती है। उस पर एक घड़ा रखते हैं। घड़े में नारियल रखते हैं। उपस्थित समूह में से कोई भी एक जोड़ा स्त्री व पुरुष सर्वथा नग्न हो जाते हैं, वे अपनी उपस्थेन्द्रियों को शराब से धोकर स्वच्छ करते हैं। पुरुष नारी के गुप्ताङ्ग की पूजा चावल आदि से करता है। नारी नर के गुप्ताङ्ग की पूजा करती है। सभी लोग ह्रीं-ह्रीं क्लीं-क्लीं आदि का जाप करते हैं। पूजा के बाद शराब का एक-एक पैक (प्रायः दो-दो तोला शराब का) सबको मिलता है। सभी स्त्री पुरुष उसे पीते हैं। बाद को मांस मिलता है, सभी खाते हैं। फिर दूसरी बार शराब मिलती है। फिर तीसरी बार मछली व शराब मिलती है। फिर दही-बड़े आदि मिलते हैं। फिर चौथी बार शराब मिलती है। एक बार पुनः पाँचवीं बार शराब का दौर चलता है। इस प्रकार मद्य, मांस, मीन (मछली) मुद्रा (पकोड़े) यह चार मकार हुए। इस सबके बाद रोशनी बन्द कर दी जाती है और रात भर मैथुन का क्रम जारी रहता है। यह मद्य, मांस, मीन, मुद्रा व मैथुन वाममार्गीयों के धर्म के मूल पञ्च मकार कहलाते हैं। जिस पुरुष व स्त्री के गुप्ताङ्ग का पूजन होता है वे दोनों साधक व साधिका कहलाते हैं। मैथुन क्रम के दो रूप होते हैं। व्यक्तिगत एवं समष्टिगत। व्यक्तिगत में हर जोड़ा अपने तक सीमित रहता है, समष्टिगत में सारी स्त्रियों की चोलियाँ उतरवा कर एक घड़े में डालकर डण्डे से घुमा दी जाती हैं। फिर हर आदमी उसमें से हाथ डाल कर चोली निकाल लेता है। फिर जिस स्त्री की चोली जिस पुरुष के पास पहुँचती है, वह रात भर उसी के पास रहती है। प्रातःकाल होने पर वह समारोह विसर्जित हो जाता है और हर जोड़ा अपने असली जोड़े से मिल जाता है। बनारस आदि जगहों में भी जो शिवजी के गढ़ हैं, इसकी शाखाएँ लगती हैं।

वाममार्ग का स्वरूप प्रकट करने के लिए ये श्लोक काफी होंगे।

मद्यं, मांसं च मीनं च मुद्रा मैथुनमेव च।
एते पञ्च मकाराः स्युर्मोक्षदा हि युगे युगे॥

(कालीतन्त्र)

मातृयोनिं परित्यज्य विहरेत् सर्वयोनिषु।।

—महनिर्वाण तन्त्र

शराब, मांस, मछली, पकोड़े तथा मैथुन ये पञ्च मकार हैं, जो मोक्ष देने वाले हैं। माता को छोड़कर के प्रत्येक स्त्री से काला मुँह किया जा सकता है।

इतने ही से वाममार्ग की असलियत पाठक समझ सकते हैं। व्यभिचार करते समय वाममार्गी अपने को भैरव व स्त्री को भैरवी बताते हैं।

भारत के प्रसिद्ध ऐतिहासिक विद्वानों ने भी बड़ी खोज के बाद निष्कर्ष घोषित किया है कि शिव द्राविणों का देवता था। जितनी भी मूर्तियाँ भारत के मूर्तिपूजकों द्वारा देवताओं की गढ़ी गई हैं, केवल शिव की ही ऐसी मूर्ति उनमें मिलती है, जो सर्वथा नग्नावस्था में उपस्थेन्द्रिय का प्रदर्शन करती हुई दिखाई देती है। मथुरा में मसानी रोड पर गोकर्ण महादेव के मन्दिर की मूर्ति, काशी में नेपाल महाराज का मन्दिर, जगन्नाथपुरी के मन्दिर व उत्तर प्रदेश के झाँसी जिले के खुजराहो के मन्दिर में नर व नारी के सम्भोग करते हुए अश्लील आसनों से युक्त मूर्तियाँ आज भी उस वाममार्गीय व्यभिचार प्रधान सभ्यता के गन्दे अवशेषों के नमूने के स्वरूप में देखी जा सकती हैं। भारतीय सभ्यताभिमानी राष्ट्रीय सरकार भी इन भ्रष्टाचार के प्रचार के गन्दे मन्दिरों में संशोधन करने का साहस नहीं कर सकती है, यह कितने दु:ख की बात है।

उस मध्य काल में आज से प्राय:–प्राय: ढाई हजार वर्ष पूर्व के समय में वाममार्गीयों ने अपने गन्दे आदर्शों को प्रामाणिक बनाकर जनता को सत्य मानने का प्रभाव डालने के लिए अनेक प्रकार की कहानियाँ गढ़–गढ़ कर पुराणों में देवताओं के कार्यकलापों के रूप में लिख डाली थीं। जनता को शास्त्रों एवं देवताओं के नाम पर खूब बहकाया गया। जो पाप के प्रति शङ्का व भय जनता में था, उसे पापयुक्त कार्यकलापों को आदर्श में दिखाकर जनता को पाप के भय से मुक्त कर दिया गया। जिस कर्म को देवता करते हों तो वह पाप कैसे हो सकता है? महापुरुषों के चरित्र तो सदैव अनुकरणीय होते हैं, इस प्रकार का विश्वास जनता में पण्डित वर्ग ने पैदा करा दिया। व्यभिचार को पाप न माना जाए, इसके लिए ब्रह्मा, विष्णु, महेश व इन्द्रादि देवताओं की कल्पना की गई व उनको व्यभिचार प्रिय परस्त्रीगामी बनाने के लिए

सैकड़ों प्रकार की कहानियाँ गढ़-गढ़ कर पुराणों की रचना की है। हम पुराणों में देखते हैं कि जितना पतित चरित्र की दृष्टि से इन त्रिदेवों को पुराणकारों ने शान के साथ प्रस्तुत किया है। कदाचित् रावण व कंस का चरित्र अपेक्षाकृत कहीं अधिक श्रेष्ठ उन्होंने दिखाया है। हमारा विषय यहाँ शिवलिङ्ग पूजा के सम्बन्ध में तथ्य उपस्थित करना है, अतः हम विषयान्तर में न जाते हुए चन्द प्रमाण उन घटनाओं के प्रस्तुत करते हैं, जिनके आधार पर शिवलिङ्ग पूजा की परिपाटी जारी की गई बताई जाती है।

कहा जाता है कि एक बार ब्रह्मा, विष्णु व महादेव ने अत्रि की पत्नी सती अनुसूया से व्यभिचार की चेष्टा की थी। उसकी कथा संक्षेप में हम पुराण में से नीचे प्रस्तुत करते हैं—

सती अनसूया से व्यभिचार की चेष्टा व लिङ्ग पूजा का शिव को शाप

कदाचिद्भगवानत्रिर्गङ्गाकूलेऽनसूयया ।
सार्धं तपो महत्कुर्वन् ब्रह्मध्यानपरोऽभवत्॥ ६७ ॥
तदा ब्रह्मा हरिश्शम्भुः स्वस्ववासनमास्थिताः।
वरं ब्रूहीति वचनं तमाहुस्ते सनातनाः॥ ६८ ॥
इति श्रुत्वा वचस्तेषां स्वयम्भूतनयो मुनिः।
नैव किञ्चिद्वचः प्राह संस्थितः परमात्मनि॥ ६९ ॥
तस्य भावं समालोक्य त्रयो देवाः सनातनाः।
अनसूयां तस्य पत्नीं समागम्य वचोऽब्रुवन्॥ ७० ॥
लिङ्गहस्तः स्वयं रुद्रो विष्णुस्तद्रसवर्धनः।
ब्रह्मा कामब्रह्मलोपः स्थितस्यास्यावशं गतः।
रतिं देहि मदाघूर्णे नो चेत्प्राणांस्त्यजाम्यम्॥ ७१ ॥
पतिव्रताऽनसूया च श्रुत्वा तेषां वचो शुभम्।
नैव किञ्चिद्वचः प्राह कोपभीता सुरान्प्रति॥ ७२ ॥
मोहितास्तत्र ते देवा गृहीत्वा तां बलात्तदा।
मैथुनाय समुद्योगं चक्रुर्मायाविमोहिताः॥ ७३ ॥
तदा क्रुद्धा सती सा वै ताञ्छशाप मुनिप्रिया।
मम पुत्रा भविष्यथ यूयं कामविमोहिताः॥ ७४ ॥

महादेवस्य वै लिङ्गं ब्रह्मणोऽस्य महाशिरः।

चरणो वासुदेवस्य पूजनीया नरैस्सदा।

भविष्यन्ति सुरश्रेष्ठा उपहासोऽयमुत्तमः॥ ७५॥

—भविष्यपुराण प्रति सर्ग खण्ड ४। अ० १७

अर्थ—कभी भगवान् अत्रि मुनि अपनी पत्नी अनसूया के साथ गङ्गा किनारे रहते थे और घोर तप करते हुए ब्रह्म के मध्य में मग्न रहते थे॥ ६७॥ वहाँ पर ब्रह्मा, विष्णु व महादेव अपनी-अपनी सवारियों में बैठकर पहुँचे और उनसे सनातन श्रेष्ठ वचन बोले॥ ६८॥ इनकी बातों को सुनकर मुनि ने कोई उत्तर न दिया और परमात्मा के ध्यान में तल्लीन रहे॥ ६९॥ उनके भावों को देखकर तीनों देवता मुनि पत्नी अनसूया के समागम के लिए कहने लगे॥ ७०॥ (**लिङ्ग**) अपनी उपस्थेन्द्रिय को (**हस्तः**) हाथ में धारण किये हुए। (स्वयं रुद्रो) महादेव जी (**विष्णुस्तद्रसवर्धनः**) विष्णु जी उसमें रस बढ़ाते हुए (**ब्रह्मा**) ब्रह्मा जी (**काम**) कामदेव के प्रभाव से (**ब्रह्मलोपः**) ज्ञान का लोप करते हुए, मोहित होकर (**स्थितस्यास्या वशं गतः**) उसके वश में हो गये, आसक्त हो गये। (**रतिं देहि मदाघूर्णे**) हे मस्त आँखों वाली! हमें अपने साथ रति करने दे। (**नो चेत् प्राणांस्यत्यजाम्यहम्**) वरना हम प्राणों को छोड़ते हैं, तेरे सर हत्या देते हैं॥ ७१॥ पतिव्रता अनसूया उनके इन अशुभ वचनों को सुनकर कुछ न बोली और तीनों देवताओं के प्रति बड़ी क्रोधित हुई॥ ७२॥ (**मोहितास्तत्र ते देवाः**) काम से मोहित हुए उन देवताओं ने (**गृहीत्वा तां बलात्तदा**) उसे बलपूर्वक पकड़ लिया (**मैथुनाय समुद्योगं चक्रुर्माया विमोहिताः**) महादेव जी की माया से विमोहित होकर वे जबरदस्ती मैथुन की चेष्टा करने लगे॥ ७३॥ (**तदा क्रुद्धा··प्रिया**) तब क्रोधित होकर मुनि प्रिया अनुसूया ने उनको शाप दे दिया। (**मम··विमोहिता**) काम से विमोहित हुए तुम मेरे पुत्र बनोगे॥ ७४॥ (**महादेवस्य वै लिङ्गं**) महादेव की उपस्थेन्द्रिय। (**ब्रह्मणोऽस्य महाशिरः**) ब्रह्मा का यह बड़ा सर (**चरणो वासुदेवस्य**) विष्णु के चरण (**पूजनीया नरैः सदा**) मनुष्यों के द्वारा सदैव पूजे जाया करेंगे और (**भविष्यन्ति सुरश्रेष्ठा उपहासोऽयमुत्तमः**) हे श्रेष्ठ देवताओ! तुम्हारी सदा खूब मजाक बना करेगी॥ ७५॥

पुराण के इस प्रमाण से स्पष्ट है कि अत्रि ऋषि के ब्रह्म के ध्यान में तल्लीन होने की अवस्था में अवसर पाकर गङ्गा के किनारे तीनों देवताओं ने बलपूर्वक पकड़कर उनकी सती-साध्वी

पत्नी अनुसूया के साथ बलात्कार की चेष्टा की थी, उस पर मुनि पत्नी ने शिवजी को लिङ्ग की पूजा का शाप दिया था और तभी से शिवजी की उपस्थेन्द्रिय की पूजा अनुसूया के शाप के कारण प्रचलित हुई है। एक सती के साथ तीनों देवताओं की इस बेजां हरकत को कोई भी व्यक्ति कमीनी एवं पापपूर्ण कहे बिना न रहेगा। अस्तु शिवलिङ्ग पूजा का यह भी एक रहस्य हुआ।

जलहरी क्या है ?

शिवलिङ्ग की मूर्त्ति के चारों ओर एक नाली सी बनी होती हैं, इसे जलहरी कहते हैं। यह जलहरी वास्तव में क्या है, यह बहुत कम लोग जानते हैं, पौराणिक सिद्धान्तानुसार जलहरी शिवलिङ्ग के साथ पार्वती के गुप्ताङ्ग की प्रतिमूर्ति (नकल) रूप में पूजी जाती है। इसके लिए पुराण का प्रमाण द्रष्टव्य है।

गिरिजां योनिरूपां च वाणं स्थाप्य शुभं पुनः।
तत्र लिङ्ग च तत्स्थाप्यं पुनश्चैवाभिमन्त्रयेत्॥ ३७॥

—शिव पु० कोटि रुद्र संहिता अ० १२

अर्थ—(**गिरिजा**) पार्वती के (योनि रूपा) नारी जननेन्द्रिय के आकार की (**शुभ वाणं स्थाप्यं शुभम्**) शुभ जलहरी बनाकर (**पुनः**) फिर (**तत्र लिङ्गं**) उसमें शिव उपस्थेन्द्रिय को (**तत्स्थाप्य**) स्थापित करके (**पुनश्चैवाभि मन्त्रयेत्**) फिर उसका पूजन करो।

शिवलिङ्ग शिव की मूत्रेन्द्रिय है

प्रत्यक्षमिह देवेन्द्र पश्य लिङ्गं भगान्वितम्।
देवदेवेन रुद्रेण सृष्टिसंहारहेतुना ॥ २७॥

—महा० अनु० पर्व अ० १४

अर्थ—हे देवेन्द्र! (सृष्टिसंहारहेतुना) सृष्टि और संहार के कारणभूत (**देवदेवेन्द्ररुद्रेण**) देवाधिदेव शिवजी ने (**लिङ्ग भगान्वितम्**) पुरुष व नारी जननेन्द्रिय से चिह्नित लिङ्गमूर्ति धारण की है (**प्रत्यक्षमिह पश्य**) उसे आप प्रत्यक्ष देखें।

इस प्रमाण से स्पष्ट है कि शिवलिङ्ग की मूर्ति नर व नारी की जननेन्द्रियों की संयुक्त प्रतिमूर्ति (नकल) है।

जननेन्द्रियों का पूजा-विधान

भगेन सहितं लिङ्गं भगलिङ्गेन संयुतम्।
इहामुत्र च भोगार्थं नित्यभोगार्थमेव च॥ १०४॥

भगवत महादेवं शिवलिङ्गं प्रपूजयेत्॥ १०५॥
स्वचिह्नपूजनात्प्रीतश्च चिह्नि कार्यं नवीयते।
चिह्नकार्यं तु जन्मादि जन्माद्यं विनिवर्तते॥ १०८॥

—शिव० बिन्धे० सं० अ० १६

अर्थ—नारी जननेन्द्रिय सहित पुरुष जननेन्द्रिय और पुरुष जननेन्द्रिय सहित नारी जननेन्द्रिय यही दोनों भोग के निमित्त और नित्यभोग के लिए हैं॥ १०४॥ भगवान् महादेव को लिङ्गरूप से पूजन करे॥ १०५॥ शिवजी अपने पुरुष चिह्न को पूजने से प्रसन्न हो जाते हैं। इससे चिह्न कार्य नहीं प्राप्त होता है (अर्थात् मोक्ष हो जाती है) चिह्न कार्य जन्मादि का कारण है। चिह्न (लिङ्ग) पूजने से जन्मादि से निवृत्ति हो जाती है॥ १०८॥

शिवलिङ्ग व जलहरी का स्पष्टीकरण

लिङ्गवेदी महादेवी लिङ्गसाक्षान्महेश्वरः॥ १३॥
तयोः सम्पूजना देवः स च सा समर्चितौ॥ १४॥

—शिव पु० वायु सं० उत्तर सं० उत्तर खं० ३४

अर्थ—लिङ्गवेदी (जलहरी) पार्वती है और लिङ्ग साक्षात् शिवजी हैं। इनके पूजन से दोनों का पूजन हो जाता है।

शिव नाभियुक्त पूजा का विधान

शिवं नाभिमयं लिङ्गं प्रतिपूज्यं महर्षिभिः।
श्रेष्ठं च सर्वलिङ्गेभ्यस्तस्मात् पूज्यं विशेषतः॥

—शब्दकल्पद्रुम कोष लिङ्ग शब्द की व्याख्या पृ० २२० खं० ४

अर्थ—(**शिवं नाभिमयं लिङ्गं**) शिव को नाभि से युक्त लिङ्ग (**प्रतिपूज्यं महर्षिभिः**) महर्षियों द्वारा पूजा जाता है। (**श्रेष्ठञ्च सर्वलिङ्गं**) वह सब लोगों में श्रेष्ठ होता है। (**तस्मात्**) इसलिए (**पूज्यं विशेषतः**) विशेषरूप से उसका पूजन करना चाहिए। इससे स्पष्ट है कि केवल शिवलिङ्ग पूजने की अपेक्षा शिव की नाभियुक्त उपस्थेन्द्रिय की पूजा विशेष उपयोगी होती है।

इन प्रमाणों से स्पष्ट हो गया कि शिवलिङ्ग पूजा के रूप में नर व नारी की उपस्थेन्द्रियाँ शिवलिङ्ग व जलहरी के रूप में मन्दिरों में पूजी जाती हैं। पाठक पूछ सकते हैं कि शिव को उपस्थेन्द्रिय पूजा का शाप अनुसूया से व्यभिचार की चेष्टा करने पर लगा था, पर पार्वती को उसके साथ क्यों घसीटा गया है। इस

विषय में पुराणों में एक विस्तृत कथा दी है। हम संक्षेप में उस कथा को यहाँ उद्धृत करते हैं।

शिव का स्वरूप योनि लिङ्ग होगा
भृगु का शाप

दिलीप उवाच—

महाभागवत श्रेष्ठो! रुद्रस्त्रिपुरघातकः।
कस्माद्विगर्हितं रूपं प्राप्तवान् सहभार्यया॥
योनिलिङ्गस्वरूपं च कथं स्यात् सुमहात्मनः।
पञ्चवक्त्रश्चतुर्बाहुः शूलपाणिस्त्रिलोचनः॥

अर्थ—राजा दिलीप ने वशिष्ठ से प्रश्न किया—'त्रिपुर दैत्य को मारने वाले पाँच मुँह, चार हाथ व तीन नेत्र वाले त्रिशूलधारी शिव का पार्वती सहित गर्हित स्वरूप योनि लिङ्ग कैसे हो गया? इस शङ्का का समाधान कीजिए।'

इस पर वसिष्ठ जी ने बताया कि एक बार मुनियों की बैठक में यह निश्चय हुआ था कि इन तीनों देवताओं में कौन सा देवता सत्त्वगुण वाला है, इसका निर्णय किया जावे। इसके लिए सबने भृगु ऋषि को नियत किया और उन्हें तीनों देवों ब्रह्मा, विष्णु व महादेव की परीक्षा लेने को भेजा। इस निश्चय के अनुसार भृगु ऋषि के शङ्कर के यहाँ जाने का वर्णन पुराणकार ने जो किया है, उसे हम संक्षेप में यहाँ देते हैं—

एवमुक्तो भृगुस्तूर्णं कैलाशं मुनिसत्तमः।
जगाम वायुमार्गेण यत्रास्ते वृषभध्वजः॥ २६॥
गृहद्वारमुपागम्य शङ्करस्य महात्मनः।
शूलहस्तं महारौद्रं नन्दिमब्रवीद् द्विजः॥ २७॥
सम्प्राप्तोऽअहं भृगुः विप्रो हरं द्रष्टुं सुरोत्तमम्।
निवेदयस्व मा शीघ्रं शङ्कराय महात्मने॥ २८॥
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा नन्दी सर्वगणेश्वरः।
उवाच परुषं वाक्यं महर्षिममितौजसम्॥ २९॥
असान्निध्यः प्रभोस्तस्य देव्या क्रीडति शङ्करः।
निवर्त्तस्व मुनिश्रेष्ठ! यदि जीवितुमिच्छसि॥ ३०॥

एवं निराकृतस्तेन तत्राष्ठिन्महातपाः।
बहूनि दिवसान्यस्मिन् गृहद्वारि महेशितुः।
तत्र क्रोधसमाविष्टो भृगुःशापमदान्मुनिः॥ ३१ ॥
निविष्टस्तमसा मूढो मां न जानाति शङ्करः।
नारी सङ्गमत्तोऽसौ यस्मान्मामवमन्यते॥ ३२ ॥
योनिलिङ्गस्वरूपं वैरूपं तस्मात्तस्य भविष्यति॥ ३३ ॥
रुद्रमवताश्च ये लोके भस्मलिङ्गास्थिधारिणः।
ते पाखण्डत्वमापन्ना वेदबाह्या भवन्तु वै॥ २६ ॥

—पद्मपुराण उत्तर खण्ड अ० २५५ कलकत्ता

भावार्थ—ऋषियों से विदा होकर भृगु ऋषि कैलाश पर गये, जहाँ महादेव जी रहते थे। शङ्कर के द्वार पर पहुँच कर भृगु जी ने शूल धारण किये महारौद्र रूप नन्दी को देखा और वे उससे बोले, मैं भृगु ब्राह्मण हूँ, शङ्कर जी को देखने (मिलने) आया हूँ, अत: मेरे आने की बात शङ्कर जी से जाकर शीघ्र ही कह दो। नन्दी उनके वचन सुनकर उनसे बोला कि शङ्कर जी एकान्त में पार्वती के साथ क्रीड़ा (रमण) कर रहे हैं, अत: तुम जीवित रहना चाहते हो तो यहाँ से तुरन्त भाग जाओ। इस प्रकार नन्दी की बात सुनकर भृगुजी वहीं शङ्कर के द्वार पर बैठ गये और बहुत दिनों तक बैठे रहे, बहुत दिन होने पर भी जब उनसे शिवजी नहीं मिले तो अत्यन्त क्रोधित होकर भृगु जी ने शङ्कर को शाप दिया कि तामस में फँसा हुआ शङ्कर मुझे नहीं जानता है, वह नष्ट हो जायेगा। नारी के साथ समागम में तल्लीन शङ्कर ने मेरा अपमान किया है, अत: उनका स्वरूप भी योनि लिङ्ग हो जायेगा, शङ्कर के भक्त लोग जो लोक में भस्म लिङ्ग व हड्डी धारण करेंगे वे सब घोर पाखण्डी एवं वेद से बहिष्कृत होंगे।

हमने ऊपर के प्रमाण में देखा कि शिव की योनि लिङ्ग स्वरूप के पूजा होने का कारण भृगु ऋषि का शाप है, जो उन्होंने शिव को पार्वती के साथ रमण में तल्लीन होने के कारण दिया था। महाराजा दिलीप के प्रश्न के उत्तर में शिव के इस गर्हित स्वरूप का यह एक मुख्य कारण बताया है, अत: शिवलिङ्ग पूजा के द्वारा शिव की जो पूजा की जाती है, वह वास्तव में शिव पार्वती की जननेन्द्रियों की ही पूजा होती है, शिवलिङ्ग व जलहरी शिव व पार्वती की जननेन्द्रियों की प्रतिमूर्ति हैं, यह इस प्रमाण

से भी स्पष्ट हो जाता है। कितनी लज्जा की बात है कि लोग वास्तविकता न समझकर शिवलिङ्ग पूजा के रूप में भ्रष्ट जननेन्द्रिय पूजा की वाममार्गीय सभ्यता का अन्धानुकरण कर रहे हैं, जो कि देश में वास्तव में दुराचार के लिए प्रारम्भ की गई थी। इसी सम्बन्ध में पौराणिक साहित्य में एक कथा और भी आती है कि जगत् में जो असंख्य शिवलिङ्ग मिलते हैं, यह कैसे पैदा हुए हैं। कथा इस प्रकार है—

शिवलिङ्गों की पैदायश का इतिहास

संस्कृत के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'शब्दकल्पद्रुमकोष' चतुर्थ काण्ड खण्ड १ व २ में लिङ्ग शब्द की व्याख्या में लिखा है कि राजा दक्ष की पुत्री सती से विवाह होने के बाद—

गताः सर्वे महेशोऽपि सत्या सह तदा गृहम्।
जगाम रेमे सत्या च चिरं निर्भरमानसः॥
अथ काले कदाचित् सत्या सह महेश्वरः।
रमे न शेके तं सोढुं सती श्रान्ताभवत्तदा॥
उवाच दीनया वाचा देवदेव जगद्गुरुम्।
भगवन्नहि शक्नोमि तवभारं सुदुसहसम्॥
क्षमस्व मां महादेव कृपां कुरु जगत्पते।
निशम्य वचनं तस्या भगवान् बृषभध्वजः॥
निर्भरं रमणं चक्रे गाढनिर्दयमानसः।
कृत्वा सम्पूर्ण रमणं सती च त्यक्तमैथुना॥
उत्थानाय मनश्चक्रे उभयोस्तेजः उत्तमम्।
पपात धरणीं पृष्ठेतैः व्याप्तमखिलं जगत्॥
पाताले भूतले स्वर्गे शिवलिङ्गास्तदाभवन्।
तेन भूत्वा भविष्याच्च शिवलिङ्गाः सयोनयः॥
यत्र लिङ्गं तत्र योनियन्त्रं योनिस्ततः शिवः।
उभयोश्चैव तेजोभिः शिवलिङ्गं व्यजायत॥

—इति शिवलिङ्गोत्पत्तिकथनमिति नारदपञ्चरात्रान्तर्गत तृतीये रात्रे प्रथमाध्याये नारदब्रह्मसंवादः।

अर्थ—सती के विवाह के बाद सब देवतागण अपने घरों को चले गये और शङ्कर भी अपनी चिरकाल की मनोकामनापूर्ण करने

के लिए सती के साथ रमण करने के लिए अपने गृह में प्रविष्ट हो गये। उस काल में जब शङ्कर के साथ रमण करने से सती थक गईं तो शिवजी से बोलीं, हे जगत् गुरु! आपके दुःसह बोझ को मैं सह नहीं सकती हूं, हे जगत्पते! मुझे क्षमा करो। तब महादेव जी ने बड़ी निर्दयता के साथ अपने मन को सन्तुष्ट करने के लिए खूब रमण किया। सम्पूर्ण रमण कर चुकने पर छोड़ी हुई सती ने उठने की इच्छा की तो दोनों का उत्तम शुक्र पृथिवी पर गिर पड़ा और उससे जगत् व्याप्त हो गया। उस वीर्य से तीनों लोकों में योनियों समेत शिवलिङ्ग पैदा हो गये तथा आगे होंगे, वे योनियों सहित इसी तेज से पैदा हुए हैं तथा होंगे (यत्र) जहाँ (लिङ्ग) नर उपस्थेन्द्रिय होगी (तत्र योनिः) वहाँ नारी जननेन्द्रिय होगी वहाँ शिवलिङ्ग अवश्य होगा (उभयोश्चैव तेजोभिः) इन दोनों के तेज से ही (शिवलिङ्गं व्यजायत) शिवलिङ्ग उत्पन्न हुए हैं।

इस प्रकार जगत् में जो शिवलिङ्ग मिलते हैं, उनकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में पौराणिक शास्त्रकारों ने उपरोक्त कथा अपने ग्रन्थों में लिखकर यह बताया है कि उनकी उत्पत्ति भी शिव व सती के समागम के पश्चात् हुए शुक्र व रजःपात के तेज से हुई है। गत पृष्ठों में हमने बताया है कि शिवलिङ्ग वास्तव में शिव की उपस्थेन्द्रिय तथा जलहरी निश्चितरूप में पार्वती की जननेन्द्रिय की प्रतिमूर्ति है। भारत का कोई भी पौराणिक विद्वान् इन प्रमाणों का खण्डन नहीं कर सकता है। जो लोग शिवलिङ्ग को ज्योतिर्लिङ्ग व जलहरी को कारण सहित प्रकृति बता बैठते हैं, वे जनता को धोखे में डालने की गलत बात कहते हैं। उपरोक्त प्रमाणों का दूसरा अर्थ किया ही नहीं जा सकता है। भारत में जो पुरानी मूर्तियाँ मिली हैं, उनमें मध्ययुग की प्राचीन शिव प्रतिमाएँ भी मिलती हैं, जिनमें शिव की उपस्थेन्द्रिय की पूजा का विधान स्पष्ट प्रतीत होता है। हिन्दुओं के प्राचीन तीर्थ जगन्नाथपुरी आदि के मन्दिरों में उस बर्बर पौराणिक सभ्यता के युग की नग्न प्रतिमाएँ नर व नारी की शिश्नेन्द्रिय की पूजा का खुला प्रदर्शन करती हैं, जिन्हें देखकर प्रत्येक भारतीय सभ्याताभिमानी का सर लज्जा से नीचा हो जाता है, जिन्हें देखकर विदेशीय पर्यटकों (यात्रियों) ने भारतीय सभ्यता व संस्कृति को संसार की निगाह में काफी बदनाम किया है, परन्तु हमारे देश में धर्म के अन्ध भक्त लोग बजाए इसके कि हम उपस्थेन्द्रिय पूजा की गन्दी प्रथा को बन्द करें, उसके प्रचार के लिए निरन्तर शिव मन्दिर बनवाते जा रहे

हैं। हमारे देश का करोड़ों अरबों रुपया जो शिक्षा व धर्म प्रचार आदि राष्ट्रोत्थान के कार्यों में व्यय किया जाना चाहिए था, इन मूत्रेन्द्रियों की गन्दी पूजा के लिए शानदार मन्दिर बनवाने में उनके पीछे जायदाद लगाने में बरबाद किया जाता रहा है। जिन्हें देखकर मोहम्मद बिनकासिम महमूद गजनवी, तैमूरलङ्ग जैसे विधर्मी एवं विदेशी सदा भारत भूमि पर आक्रमण करते व उसे लूटते रहे पर हमारे देश के पण्डित पुजारियों को समझ नहीं आई। आज भी इस ज्ञान-विज्ञान के युग में हमारे देश की जनता मूत्रेन्द्रियों की पूजा उपासना करने वाली बनी रहे, यह कितने दुःख की बात है।

मन्दिरों की लूट का नमूना

सन् ७१२ में मोहम्मद बिनकासिम ने भारत पर आक्रमण किया और राजा दाहिर को मार कर नारायण कोट का प्रसिद्ध मन्दिर लूटा था, उसमें ४० देगें सोने की, जिनमें १७२०० मन सोना भरा था, ६०० सोने की विशाल मूर्त्तियाँ, जिनमें एक-एक मूर्त्ति ३०-३० मन की थी, कई ऊँट भरकर हीरा, पन्ना, मोती, मणियाँ आदि लूट कर ले गया। इसके लगभग ३०० वर्ष बाद महमूद गजनवी ने नगरकोट का मन्दिर लूटा, इसमें ७०० मन सोना, २००मन चाँदी, २० मन हीरे, मोती व जवाहिरात उसके हाथ लगे। अकेली एक जञ्जीर, जिसमें घण्टा लटक रहा था और जो ४० मन सोने की थी, सोमनाथ के मन्दिर में से हाथ लगी थी। इस मन्दिर से असंख्य हीरा, मोती, मणियाँ, सोना, चाँदी वह लूट कर ले गया, इस प्रकार भारत के हजारों मन्दिरों का न जाने कितने (कल्पनातीत) मूल्य का माल विदेशी आक्रमणकारी सदा लूट-लूट कर भारत से ले जाते रहे हैं। सोमनाथ के शिव मन्दिर के शिवलिङ्ग का एक टुकड़ा आज भी उसी समय का गजनी की मस्जिद की सीढ़ियाँ पर लगा है, जिस पर पैर रखकर नमाजी यवन मस्जिद में जाया करते हैं और वह टुकड़ा उनके चरण स्पर्श किया करता है। मोहम्मद गौरी ने जब कन्नौज को लूटा तो १००० मन्दिर विध्वंस करके उनकी लूट का सोना, चाँदी व जवाहिरात ४०० ऊँटों पर लाद कर अफगानिस्तान को ले गया था। भारत में विदेशियों द्वारा लूट का इतिहास इतना बड़ा है कि उस पर एक स्वतन्त्र विशाल ग्रन्थ लिखा जा सकता है।[१] हमने यहाँ चन्द नमूने

१. किन्तु स्वतन्त्र भारत की काँग्रेसी सरकार इन सभी तथ्यों पर पर्दा डालकर दुर्भाग्यपूर्ण खेल, खेल रही है। (सम्पादक)

मात्र पेश किये हैं।

शिवलिङ्ग शिवजी की मूत्रेन्द्रिय ही है, यह ऊपर के प्रमाणों से भली प्रकार सिद्ध है। हम महाभारत ग्रन्थ से दो प्रमाण इसकी पुष्टि में और देते हैं।

शिवलिङ्ग ब्रह्मचर्य में स्थित है

नित्येन च ब्रह्मचर्येण लिङ्गमस्य यदा स्थितम्।
महान्त्यस्य लोकाश्च प्रियं ह्येतन्महात्मनः॥ १५॥
विग्रहं पूजयेद्यो वै लिङ्गं वापि महात्मनः।
लिङ्गपूजयिता नित्यं महतो श्रियमश्नुते॥ १६॥
ऋषयश्चापि देवाश्च गन्धर्वाप्सरसस्तथा।
लिङ्गमेवार्चयतिस्म यत्तदूर्ध्वं समास्थितम्॥ १७॥

—महाभारत अनुशासन पर्व अ० १६१

अर्थ—महादेव की उपस्थिथेन्द्रिय सदा ब्रह्मचर्य में स्थिर रहती है और उसको लोग पूजते हैं। महात्मा को यही प्रिय है, जो महात्मा की उपस्थेन्द्रिय को पूजता है या महात्मा के शरीर को पूजता है, वह बड़ी भारी सम्पत्ति को पाता है। ऋषि और देवता गन्धर्व व अप्सराएँ सदा उसी उपस्थेन्द्रिय को पूजते हैं, जो सीधा ऊपर को खड़ा है।

इस प्रमाण में बिल्कुल स्पष्ट शब्दों में बताया है कि शिवजी की उपस्थेन्द्रिय ब्रह्मचर्य में स्थित है। ब्रह्मचर्य का सम्बन्ध जननेन्द्रिय के संयम द्वारा वीर्य की सुरक्षा से है, अतः साधारण बुद्धि वाला मनुष्य भी यह समझ सकता है कि शिवलिङ्ग शिवजी की मूत्रेन्द्रिय के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। हम इससे भी स्पष्ट प्रमाण एक और देते हैं।

शिवलिङ्ग का उपस्थेन्द्रिय होने का खुला सबूत

न शुश्रुम यदन्यस्यलिङ्गमभ्यर्चितं सुरैः ॥ २३०॥
कस्यान्यस्य सुरैः सर्वैर्लिङ्गमुक्ता महेश्वरम्।
अर्चयेऽर्चितपूर्वां ब्रूहि याद्यास्ति ते श्रुतिः॥ २३१॥
यस्य ब्रह्मा च विष्णुश्च त्वं चापि सह देवताम्।
अर्चयेथा सदा लिङ्गं तस्माच्चेष्टत मोहिताः॥ २३२॥
न पद्माङ्का चक्राङ्का न वज्राङ्का बत प्रजाः।
लिङ्गाङ्का च भगाङ्का च तस्मान्माहेश्वरी प्रजाः॥ २३३॥

देव्याः कारणरूपमात्रजनिताः सर्वा भगाङ्काः स्त्रियः।
लिङ्गं नापि हरस्य सर्वपुरुषाः प्रत्यक्षं चिह्नीकृताः॥२३४॥
पुल्लिङ्गं सर्वमीशानां स्त्रीलिङ्गं विद्धि चाप्युमाम्।
द्वाभ्यां तनुभ्यां व्याप्तं हि चराचरमिदं जगत्॥२३५॥

—महाभारत अनुशासन पर्व अ० १४

अर्थ—हमने नहीं सुना कि देवताओं ने किसी और की उपस्थेन्द्रिय की पूजा की हो। महादेव को छोड़कर दूसरे किसकी उपस्थेन्द्रिय की पूजा सब देवताओं ने पूर्व काल में या अब की है, कहिए! यदि आपने सुना हो। जिसकी उपस्थिेन्द्रिय को ब्रह्मा, विष्णु व आप सब देवताओं के साथ सदा पूजते हैं, इसलिए वही इष्टतम है। जिस कारण से प्रजा पद्म, चक्र या वज्र चिह्न वाली नहीं हैं, अपितु सारी प्रजा लिङ्ग तथा भग चिह्न से अङ्कित है, इसलिए सारी प्रजा महादेव की है। देवी ने कारण रूप भाव में भग के चिह्न से अङ्कित सब स्त्रियाँ पैदा की हैं। जितने पुल्लिङ्ग हैं, वे सभी महादेव तथा जो स्त्रीलिङ्ग हैं, वे सभी पार्वती हैं। इन दोनों के शरीर से सारा जगत् व्याप्त है।

जगत् में सारे ही पुरुष (नर) जो पुल्लिङ्ग होने का चिह्न धारण करते हैं, वही चिह्न शिवलिङ्ग है, अर्थात् शिवलिङ्ग शिव जननेन्द्रिय के अतिरिक्त और कुछ नहीं है, यह बात इस प्रमाण से नितान्त स्पष्ट है। कितने आश्चर्य की बात है कि ब्रह्मा और विष्णु भी शिव उपस्थेन्द्रिय की पूजा किया करते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि यह तीनों देवता कभी वाममार्गीय हो गये होंगे और भैरवी चक्र में यह सारी ऊटपटाङ्ग हरकतें किया करते हैं।

भगवान् परम पवित्र हैं, ऐसा संसार के सभी मतवादी मानते हैं, अतः जो भी वस्तु सनातनी भगवान् की प्रतिमा को छू जावे, वह भी अति पवित्र हो जानी चाहिए, यह सब बुतपरस्तों का विश्वास है। इसी प्रकार शिवजी यदि देवता हैं, तो उनको छू जाने वाली वस्तु उनका मन्दिर उनके नाम प्रसाद आदि सभी परम पवित्र माना जाना चाहिए, किन्तु पुराणों में इसके विपरीत वर्णन मिलता है और उससे भी यह सिद्ध होता है कि शिवलिङ्ग शिवजी की उपस्थेन्द्रिय के अतिरिक्त और कोई वस्तु नहीं है। हम चन्द प्रमाण इस विषय में भी उपस्थित करते हैं।

शिवलिङ्ग को छू जाने वाली वस्तु अपवित्र होती है

स्पृष्ट्वा रुद्रस्य निर्माल्यं सवासा आप्लुतः शुचिः।

—शिवाङ्क पृ० १८३

र्थ—शिवलिङ्ग पर चढ़ी हुई वस्तु कोई छू भी ले तो कपड़े ..त स्नान करने पर शुद्ध होता है।

अनर्हं मम नैवेद्यं पत्रं पुष्पं फलं जलम्।
मह्यम् निवेद्य सकलं कूपम् एवं विनिक्षिपेत्॥ २०४॥

—पद्मपुराण पाताल खण्ड अं० ११४ कलकत्ता

अर्थ—शिवजी कहते हैं कि मेरे नैवेद्य पत्र, पुष्प, फल और जल कोई भी ग्रहण करने योग्य नहीं है। मेरे ऊपर चढ़ाया हुआ नैवेद्य (परशाद) कुएँ में फेंक दो।

"शिवलिङ्ग पर चढ़ा अन्न, पण्डा का अन्न और तीर्थों में दान देने वाले ब्राह्मण का अन्न निषिद्ध है।"

—देवीभागवत भाषा स्क० ९। अ० ८०। पृ० ७५६

लिङ्गो परिचयद् द्रव्यं यत् तद् ग्राह्यं मुनीश्वरः।
सपवित्रं च तज्ज्ञेयं यल्लिङ्गं स्पशेद् बाह्यतः॥

—शिवपुराण विन्ध्येश्वर सं० २२। श्लोक २०

अर्थ—हे मुनीश्वरो! शिवलिङ्ग से जो छुई हुई न हो वह वस्तु ग्रहण करने योग्य और जो लिङ्ग पर चढ़ा दी गई, वह ग्रहण करने योग्य नहीं है।

शिवप्रसाद शराब-मांस व विष्ठा के समान है

नान्यदेव तु वीक्षेत् ब्राह्मणो न च पूजयेत्।
नान्यप्रसादं भुञ्जीत नान्यस्यायतनं विशेत्॥ ७॥
इतरेषां तु देवानां निर्माल्यं गर्हितं भवेत्॥ १०४॥
सकृदेव हि योऽश्नाति ब्राह्मणो ज्ञानदुर्बलः।
निर्माल्यं शङ्करादीनां च चाण्डालो भवेद् ध्रुवम्॥ १०५॥
कल्पकोटिसहस्त्राणि पच्यते नरकाग्निना।
निर्माल्यं भो द्विजश्रेष्ठाः रुद्रादीनां दिवौकसाम्॥ २०६॥
रक्षोयक्षपिशाचान्नं मद्यमांससमं स्मृतम्॥ १०७॥

—पद्मपुराण उत्तर खण्ड अ० २५५ कलकत्ता

अर्थ—ब्राह्मण दूसरे देवता का न तो दर्शन करे और न पूजे, न उसके प्रसाद को खाये, न उसके मन्दिर में जाये न दूसरे देवताओं का प्रसाद ग्रहण करे। जो मूर्ख ब्राह्मण शिव निर्माल्य को खाता है, वह मानो विष्ठा खाता है। शङ्करादि के निर्माल्य को खाने वाला निश्चित चाण्डाल होता है। वह नरक की आग में करोड़ों कल्प तक पड़ा रहता है। हे ब्राह्मणो! शिव आदि देवताओं का निर्माल्य खाने वाला निश्चय चाण्डाल होता है। वह नरक की आग में करोड़ों कल्प तक पड़ा रहता है। हे ब्राह्मणो! शिव आदि देवताओं का निर्माल्य खाना शराब व मांस के तुल्य है।

इस प्रमाण में शिवलिङ्ग के ऊपर चढ़े प्रसाद की कितनी प्रबल निन्दा की गई है। यह शिव भक्त लोग आँख खोल कर देखें और सोचें कि शिवलिङ्ग जिसकी वे रात दिन पूजा किया करते हैं, कितनी अपवित्र वस्तु है। शङ्कर के ऊपर चढ़ा प्रसाद खाना महापाप है। उसे खाने वाला चाण्डाल होगा, यह पुराण का फैसला है। अब हम दिखाते हैं कि शिवजी की वास्तविक पूजा शिवजी के वास्तविक भक्त वाममार्गी लोगों ने किस चीज से करने का विधान किया है।

शराब मांस व रज वीर्य से शिवजी का पूजन करो

शिव जी का आदेश जारी—

मधुकुम्भसहस्त्रैस्तु मांसभारशतैरपि।
न तुष्यामि वरारोहे! भगलिङ्गामृतं विना॥

—कुलार्णव तन्त्र उल्लास ८

अर्थ—शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती! हजारों घड़े शराब तथा सैकड़ों भार मांस से भी मेरी पूजा की जाए तो भी मैं भग लिङ्गामृत (रज-वीर्य) के बिना कभी सन्तुष्ट नहीं होता हूँ।

शिव मन्दिर में देव पूजन व हवन का निषेध

देवालयेषु सर्वेषु वर्जयित्वा शिवालयम्।
देवानां पूजनं राजन्नग्निकार्येषु वा विभो॥ ५५॥

—भविष्यपुराण ब्रह्म पर्व अ० २१०

अर्थ—हे राजन्! शिवालय को छोड़कर बाकी सब मन्दिर में देव पूजन व हवन जैसे पवित्र कार्य करने चाहिए।

इन प्रमाणों के आधार पर हमने आपको बताया कि शिवलिङ्ग

वास्तव में शिव मूत्रेन्द्रिय ही है, अतः बड़ी गन्दी वस्तु है। सनातन धर्म की शाखा वाममार्ग के शास्त्रों में विधान है कि शराब मांस आदि से शिवजी की पूजा की जानी चाहिए। जो वस्तु शिवलिङ्ग को छू जाए, उसे छूना भी पाप है। शिवलिङ्ग पर चढ़ी हुई सभी वस्तुएँ अशुद्ध हो जाती हैं। उन्हें कोई भी न छुए, उन चीजों को कुएँ में डाल दे। तब फिर हम पूछते हैं कि शिवलिङ्ग को पूजना, उस पर सर टेकना, उसे चन्दन लगाना, उस पर फल फूल दूध आदि चढ़ाना उस पर गङ्गाजल छोड़ना, बेलपत्र चढ़ाना आदि पाप नहीं तो क्या है? सनातन धर्म के अनुसार शिवजी ने गङ्गा को सर पर धारण किया था। गङ्गा को शिवतनया (शिवपुत्री) भी कहते हैं। तो ऐसी पवित्र गङ्गा के जल को शिवलिङ्ग पर चढ़ाना यह क्या कोई बुद्धिमानी की बात है? शिव मन्दिर में भजन, पूजन व हवन का निषेध पुराण ने किया है, तब फिर शिव मन्दिरों को बनवाना, उनमें भजन करना सनातन धर्म के शास्त्रों के विरुद्ध होने से पाप कर्म क्यों नहीं है? भजन तो पवित्रता पूर्वक पवित्र स्थान में किया जाता है। शिव मन्दिर तो पुराणों ने अपवित्र स्थान बताए हैं, उनमें जाकर धूप, दीप, नैवेद्य शिवलिङ्गों पर चढ़ाना क्या कोई अक्लमन्दी की बात है। चन्दन व धूप आदि को मूत्रेन्द्रियों पर चढ़ाना यह पागलपन नहीं तो क्या कहा जाएगा। शिव जी का प्रसाद, शराब, मांस व विष्ठा के समान पुराण ने बताया है। तब फिर पौराणिक बन्धु ऐसा गन्दा प्रसाद क्यों बाँटते हैं? शराब, मांस, रज व वीर्य से शिवजी की पूजा का विधान है तो क्या शङ्कर कोई अघोरी सम्प्रदाय का लीडर था, उसे इन घृणित चीजों से नफरत नहीं थी? हमें कहना है कि सनातनी ब्राह्मण तो स्वार्थ में अन्धे बने हुए हैं। पत्थर पूजते-पूजते उनकी अक्ल पत्थर की हो गई है, वे न तो पुराणों को पढ़ते हैं न अक्ल से सोचने का काम लेते हैं। सदा जनता को स्वार्थवश बहकाते रहते हैं। पर जनता को भी इतना अन्ध-विश्वासी नहीं होना चाहिए कि जो भी चाहे जैसे धर्म के मामले में मूर्ख बनाता रहे और वह भेड़ों के समान उसके पीछे चले जाकर अपने जीवन को नष्ट करता रहे।

कुछ ठीक है, इस शरारत का कि हमारे धर्म के ठेकेदारों ने ईश्वर के स्थान पर शिवजी की मूत्रेन्द्रिय की पूजा (बकौल पुराणों के) शिवलिङ्ग के रूप में देश में जारी करा दी और भोला हिन्दू उसे ही ईश्वर मानकर पूजने लगा। मेरे देश के भाग्य फूट गये, उस दिन से जब से यहाँ के निवासी ईश्वर को भूलकर योनि लिङ्ग की प्रतिमूर्ति शिवलिङ्ग को ईश्वर की जगह पूजने लगे। मेरे

देशवासियो! तुमको अपनी इस भोली अक्ल पर अब तो जरा लाज आनी चाहिए। तुम्हारे इस भोलेपन के कारण मेरा भारतवर्ष बड़ा कलङ्कित हुआ है।

पुराणों ने शिव के भक्तों की भी बहुत निन्दा की है। उसका मुख्य कारण शिवजी को चरित्र की दृष्टि से बहुत ही आपत्तिजनक रूप में उपस्थित करना है। जब विद्वानों ने शिवलिङ्ग पूजा के प्रचार की ओर ध्यान दिया तो उन्होंने इस बुराई को रोकने के लिए जनता को सचेत किया था। यहाँ हम चन्द प्रमाण इस सम्बन्ध में उपस्थित करते हैं, जिनसे आप यह देख सकेंगे कि शिव के इस गर्हित स्वरूप में पूजन को देखकर शिव की निन्दा की गई है।

शिव के भक्त पाखण्डी व अछूत हैं

यस्तु नारायणं देवं ब्रह्मरुद्रादिदैवतैः।
समत्वं नैव वीक्षेत स पाखण्डी भवेत् सदा॥ ११॥
क्रिमत्र बहुनोक्तेन ब्राह्मणा येऽप्यवैष्णवाः।
न स्पृष्टव्या न वक्तव्या न द्रष्टव्या कदाचन॥ १३॥

—पद्मपुराण उत्तर खण्ड अ० २३५

अर्थ—जो लोग विष्णु को शिव व ब्रह्मा के समान बताते हैं, वे सब पाखण्डी हैं। जो ब्राह्मण वैष्णव नहीं हैं, जो शिव के उपासक हैं, उनको न तो छूना चाहिए न उनसे बात करनी चाहिए और न उनकी शक्ल ही देखनी चाहिए।

शिव-प्रसाद की निन्दा

शिवनिर्माल्यभोक्तारश्शिवानिर्माल्यलङ्घकाः।
शिवनिर्माल्यदातारः स्पर्शस्तेषां ह्यपुण्यकृत्॥ २९॥

—शिवपुराण रुद्रसंहिता सृष्टि खं० अ० १८

अर्थ—शिव के प्रसाद को खाने वाले, **शिवप्रसाद को उल्लङ्घन न करने वाले**। शिव प्रसाद को देने वाले इन सब को छूना भी पाप को देने वाला है।

शिव को पूजने वाला ब्राह्मण शूद्र होता है

रुद्रार्चनाद ब्राह्मणस्तु शूद्रेण समतां व्रजेत्।
यक्षभूतार्चनात् सद्यश्चाण्डालत्वमवाप्नुयात्॥

—वृद्ध हारीत स्मृति २।४७

अर्थ—शिव की पूजा करने से ब्राह्मण शूद्र तुल्य हो जाता है, यक्ष तथा भूतों की पूजा करने से तत्काल चाण्डाल बन जाता है, (यक्ष व भूत शिवजी के गण बताए जाते हैं)।

शिवादि के पूजने वाले टट्टी के कीड़े बनेंगे

वैष्णवः पुरुषो यस्तु शिवब्रह्मादिदेवतान्।
प्रणमयेद्यर्चयेद्वा विष्ठायां जायते कृमिः ॥ २६१ ॥

—वृद्ध हारीतस्मृति

अर्थ—यदि विष्णु का उपासक भूलकर भी शिव ब्रह्मा आदि को प्रणाम, अर्चना करता है तो वह मर कर पाखाने का कीड़ा बनेगा।

शिवजी की तब तो पूजा करने वाले वैष्णवों की और भी बड़ी दुर्गति होगी। इन प्रमाणों से सिद्ध है कि शङ्कर के घोर भक्त और पाखण्डी व धर्म विरोधी हैं। सनातन धर्म के शास्त्र की व्यवस्था है कि यदि विष्णु भक्त शिव को प्रणाम भी कर बैठे तो विष्ठा का कीड़ा बनेगा।

इन प्रमाणों से एक बात अत्यन्त स्पष्ट है कि शैवों (वाममार्गियों) ने जब देश में शिवलिङ्ग पूजा के रूप में घोर दुराचार फैलाने का प्रयत्न किया था तो उसकी प्रतिक्रिया बड़ी प्रबल हुई थी। **लोग शिव के उस स्वरूप को सहन नहीं कर सके थे। वास्तव में शिव का वह स्वरूप सहन करने योग्य था भी नहीं।** पुराणों एवं महाभारत में शिव की प्रशंसा में जो विशेषण दिए गये हैं, उनके शिव के स्वरूप का एक चित्र सामने आ जाता है। हम उसे यहाँ उपस्थित करते हैं। **आप इस पर विचार करें और सोचें कि क्या यह स्वरूप एक देवता या ईश्वर का हो सकता है?** अथवा भयङ्कर आकृति वाले किसी राक्षसादि व्यक्ति का होगा।

शिव का शरीर (नील लोहित) नीले वर्ण का है, वह (शूल-धर) शूल धारण करता है, उसके नेत्र (विरूपाक्ष, रक्त, उन्मत्त-लोचन) भयानक, लाल एवम् उन्मत्तों जैसे रहते हैं, उसकी (कुटिल-भ्रकुटीधरः) भृकुटी कुटिल हैं, उसके (उन्मत्त केश) बिखरे हुए बाल, व (जटी जटाधार) लम्बी-लम्बी जटाएँ हैं, वह (कपाली कपाल विलसद् हस्तः) हाथों में खप्पर धारण करता है, वह (विवासा) नङ्गा रहता है, वह (कोपीन वासा) केवल कोपीन

पहनता है, वह (नीलकण्ठः) नीले कण्ठ वाला है, उसका शरीर (महाकाय) बहुत विशाल है, वह (भस्मोद्धूलविग्रहः) अपने शरीर पर भस्म रमाता है (भस्मप्रिय) वह भस्म से प्रेम करता है, (भस्मशायी) भस्म में लोट लगाता है, भस्म भी साधारण नहीं बल्कि (चिताभस्मसंलिप्तश्चिताभस्मपरायणः) मरघट की चिता की भस्म लपेटता है, (चिताप्रमोदी) चिताओं से उसे प्रेम है, वास्तव में वह (श्मशानाधिपतिः) मरघटों का ही स्वामी है (श्मसानस्थ, श्मशाननिलयस्तिष्ठति) मरघट में ही रहता है, मरघटवासी है, वह (निशाचर) रात में विचरता है (प्रेताचारी) भूत प्रेतों के साथ विचरने वाला है (पिनाकी) पिनाक नाम का तीर कमान धारण करता है (व्याली) वह गले व बाँहों में साँप लपेटे रहता है, (राहु, शनिः) राहु, व शनिश्चर के समान संसार को पीड़ा देने वाला है, (कमण्डलधरो) हाथों में कमण्डल धारण करता है, कायाचारी, कामुकवरः) बहुत विषयी व कामियों में भी शिरोमणि, (महालिङ्ग) बड़ी उपस्थेन्द्रिय वाला है, (ऊर्ध्व लिङ्ग) वह ऊपर को लिङ्ग वाला है, (कामी) बड़ा कामी है, (कामदेव) साक्षात् कामदेव की मूर्त्ति है, (उग्र) बड़ा क्रोधी है, (उन्मत्त वेषः) पागलों जैसा भेष रखता है (भयदाता) वह बड़े भयङ्कर स्वरूप वाला है (कामातुरः) वह हर समय विषय भोग की इच्छाएँ मन में रखता है, व्यभिचार में पकड़े जाने से दारु बन में लिङ्ग कट जाने से लिङ्गहीन हो गया है, इसलिए उसका नाम (षण्ढ) हिजड़ा नपुंसक या मुखन्नस हो गया है, परेशानियों के कारण (सर्वदोन्मत्तमानसः) सदैव उसके दिल-दिमाग में उन्मत्तता, पागलपन सवार रहता है। इस पर भी वह (मकरन्द प्रिय) खुशबू से प्रेम करता है। वह (वृष वाहन) बैल की सवारी करता है, वह (मृग व्याध) व्याध के समान भोले हिरणों का वध, शिकार किया करता है। शङ्कर के इस स्वरूप को देखकर पुराणकारों ने उसे (धूर्त) शब्द से सम्बोधित किया है।

शङ्कर के उपरोक्त कोष्ठकों के अन्दर के उपनाम वाची शब्द महाभागवत, स्कन्द पुराण और शिव पुराण तथा महाभारत में बड़े गौरव के साथ दिए गये हैं। इसी प्रकार शिव की पत्नी पार्वती, जिसे दुर्गा भी कहते हैं, उनके स्वरूप का वर्णन करते हुए पुराणकार ने लिखा है।

दुर्गा का स्वरूप

निशुम्भशुम्भसंहत्री मधु मांसासवप्रिया॥

—शिवपुराण वायु० सं० अ० ३१। श्लो० ९०

उग्रदंष्ट्रा चोग्रदण्डा कोट्टवी च पपौ मधु॥ ३॥
जगर्ज साट्टहासं च दानवा भयमाययुः॥ १२॥
दानवानां बहूनां च मांसरुधिरं तथा॥ ३६॥
भुक्त्वा पीत्वा भद्रकाली शङ्करान्तिकमाययौ॥ ३७॥

—शिवपुराण रुद्र सं० युद्ध खं० अ० ३८

जयति दिगम्बरभूषा सिद्धबटेशा महालक्ष्मीः॥ १३॥
दिग्वसना विकृतमुखा विकरालदेहा रौद्रभावस्था॥ १४॥
जयति भुजङ्गेन्द्रमणिः शोभितकर्णा महातुण्डा॥ १७॥
सिहारूढा विनिर्गत्य दुर्गाभिः सहिता पुरा॥ २४॥
कुमारी विंशतिभुजा घनविद्युल्लतोपमा॥ २५॥

—भविष्यपुराण उत्तर खण्ड अ० ६१

अर्थात् दुर्गा–निशुम्भ–शुम्भ को मारने वाली, मधु–मांस सेवन करने वाली, तेज दांतों वाली, कठोर डण्डे वाली, शराब पीने वाली, गर्जने वाली, अट्टहास करने वाली, मांस व रुधिर का भोजन करने वाली, नर मुण्डों को पहिनने वाली, चण्डी–नङ्गी–कुरूपा–विकराल देह वाली, डरावनी बिजली की सी चमकने वाली, कानों में सर्प मणि–लम्बी चौंच–सिंह की सवारी करने वाली, कुमारी–बीस भुजा वाली, इत्यादि स्वरूप वाली है।

इसके अतिरिक्त दुर्गा की निम्न उपाधियाँ पुराण में और दी हैं—

उन्नतस्तनी, घनस्तनी, बलिप्रिया, मांसभक्ष्या, रुधिरासव-भक्षिणी, भीमरवा, सदृश्य सा रणनृत्यपरायणा, छिन्नमस्तका, छागमांसप्रिया, छागबलिप्रिया, भुजङ्गा तामसी वक्ता, तमोगुणवती, रक्तनयना, रक्तेक्षणा, रक्तिभक्ष्या, रक्तमतोरण-श्रिया, रक्तदन्ता, रक्तजिह्वा, रक्तभक्षणतत्परा, रक्तप्रिया, रक्ततुष्टा, रक्तपानासु तत्परा, अष्टहस्ता, दशभुजां चा अष्टादशभुजान्विता, सिंहपृष्ठसमारूढा, सहस्त्रवज्रराजिता, कामातुरा, काममत्ता, काममानससत्तनुःयुवती तोवनोद्रिक्ता स्वैरिणी, स्वेच्छविहरा, योनिरूपा, योनिपीठस्थिता, योनिस्व-रूपिणी; कामालसिता,

चावाणी-कटाक्ष क्षेप मोहिनी, मैनकागर्भसम्भूता इत्यादि।

—महाभागवत पुराण अ० २३

उपरोक्त स्वरूप को देखकर यह सोचा जा सकता है कि यह स्वरूप किसी दिव्य गुणधारी सौम्य स्वभाव वाली निष्कलङ्क सात्त्विक प्रकृति वाली आदर्श देवी का हो सकता है अथवा किसी भयानक तामसी प्रकृति की राक्षसी का यह स्वरूप है। शङ्कर व दुर्गा की कल्पना वाममार्गियों एवं तान्त्रिकों ने की है। हमारी इस स्थापना का समर्थन शङ्कर व दुर्गा के स्वरूप को देखने से हो जाता है। देवता या देवी का स्वरूप इतना पवित्र, प्रेममय आकर्षण-निर्दोष, तेजःस्वरूप, शान्ति आदि दिव्य गुणधारी होना चाहिए। जिसे देखकर भक्त में प्रेम व निर्भयता उत्पन्न हो, उसे प्राप्त करके भक्त उसके आनन्द में सराबोर हो जाए। उपासक में उपास्य के गुण आते हैं, ऐसे तामस प्रकृति के शिव दुर्गा की उपासना करने वालों में वैसे ही सारे दुर्गुण समाविष्ट होंगे, निश्चित ही है। यह वही दुर्गा है, जिसकी भक्ति में नवदुर्गों में हिन्दू दिन-रात तन्मय रहता है।

इस प्रकार हमने दिखाया कि शिव व पार्वती अपने स्वरूप से देवता की श्रेणी में नहीं आते हैं। शिव की कल्पना वैदिक नहीं है। शिवलिङ्ग की पूजा शिव पार्वती की जननेन्द्रियों की ही पूजा है। पार्वती के उपनाम 'महाभागवत पुराण' में योनिरूपा, योनि-पीठस्थिता, स्वैरिणी योनिस्वरूपिणी आदि दिए हैं, जो इसी बात की पुष्टि करते हैं कि शिवलिङ्ग में जलहरी पार्वती जननेन्द्रिय की प्रतिमूर्ति है। अब हम चन्द प्रमाण शिव के चरित्र सम्बन्धी और आगे उपस्थित करते हैं, जिन्हें देखकर आप यह अनुमान लगा सकेंगे कि पुराणकारों ने फर्जी शिव के जीवन की कथाएँ पुराणों में लिख-लिख कर शङ्कर को संसार की निगाहों में चरित्र की दृष्टि से कितना नीचे गिराया है। हम सर्वप्रथम प्रसिद्ध दारुवन की घटना प्रस्तुत करते हैं।

दारुवन की कथा

दारु नाम का एक उपवन था, जिसमें भृगु ऋषि का आश्रम था। उसमें बहुत से शिवभक्त तपस्वीजन निवास करते थे। एक दिन वे लोग यज्ञ के लिए समिधाएँ लेने वन में गये हुए थे।

एतस्मिन्नन्तरे साक्षात् शङ्करो नीललोहितः।
विरूपं च समास्थाय परीक्षार्थं समागतः॥ ९ ॥

दिगम्बरोऽतितेजस्वी भूतिभूषणविभूषितः।
सचेष्टां सदक्षां च हस्ते लिङ्गं विधारयन्॥ १०॥
मनसा च प्रियं तेषां कर्तुं वै वनवासिनाम्।
जगाम तद्वनं प्रीत्या भक्तप्रोतोहरः स्वयम्॥ ११॥
तद्दृष्ट्वा ऋषिपत्न्यस्ताः परं त्रासमुपागताः विह्वला।
विस्मिताश्चान्यास्समाजग्मुस्तथा पुनः ॥ १२॥
आलिलिङ्गस्तथा चान्याः करै धृत्या तथा परः ।
परस्परन्तु सङ्घर्षात्संमग्नास्ताः स्त्रियस्तदा ॥ १३॥

अर्थ—इसी समय में साक्षात् नील लोहित शङ्करजी विकटरूप धारण किये उनकी परीक्षा के निमित्त वहाँ गये॥ ९॥ वे साक्षात् दिगम्बर (सर्वथा नङ्गे), अति तेजस्वी, विभूति रमाये हुए कामियों के समान (दुष्ट) चेष्टा करते हुए, हाथ में लिङ्ग धारण किये हुए॥ १०॥ भक्तों से प्रसन्न होकर उन बनवासियों की मन से भलाई करने के लिए प्रसन्नता से वहाँ गये॥ ११॥ उनको इस (नग्न) अवस्था में देखकर ऋषि पत्नियाँ बड़ी परेशान हुईं, व्याकुल हो गईं, कई विस्मित होकर वहाँ आ गईं॥ १२॥ और हाथ से पकड़कर उनसे परस्पर आलिङ्गन करने लगीं। इस प्रकार आलिङ्गन करने से वे स्त्रियाँ बड़ी प्रसन्न हुईं॥ १३॥

एतस्मिन्नेव समये ऋषिवर्य्याः समागमन्।
विरुद्धं तं च ते दृष्ट्वा दुःखिताक्रोधमूर्छिताः॥ १४॥
तदा दुःखमनुप्राप्ताः कोयं कोयं तथाऽब्रूवन्।
समस्ता ऋषयस्ते व शिवमाया विमोहिता॥ १५॥
यदा च नोक्तवान् किञ्चित्सोऽवधूतो दिगम्बरः।
ऊचुस्तं पुरुषं भीमं तदा ते परमर्षयः॥ १६॥
त्वया विरुद्धं क्रियते वेदमार्गविलोपि यत्।
ततस्त्वदीयं तल्लिङ्गं पततां पृथिवी तले॥ १७॥

इसी अवसर में श्रेष्ठ ऋषि भी आ गये। इन विरुद्ध कार्यों को देखकर वे बड़े दुःखी हुए तथा क्रोध से बैचेन हो गये॥ १४॥ उस समय दुःखित हुए शिव की माया से मोहित ऋषि आपस में बोले, यह कौन है ?॥ १५॥ पर वह नङ्गा अवधूत शिव कुछ न बोला तो वे परम ऋषि उस भयङ्कर पुरुष से कहने लगे॥ १३॥ तुम यह वेद मार्ग को लोप करने वाला सिद्ध कार्य करते हो, इसलिए

तुम्हारा यह लिङ्ग भूमि पर गिर पड़े॥ १७॥

सूत उवाच इत्युक्ते तु तदा तैश्च लिङ्गं च पतितं क्षणात्।
अवधूतस्य तस्याशु शिवास्याऽद्भुतरूपिण:॥ १८॥
तल्लिङ्गं चाग्निवत्सर्वं यद्ददाह पुरा स्थितम्।
यत्र यत्र च तद्याति तत्र तत्र च दहेत्पुन:॥ १९॥
पाताले च गतं तच्च स्वर्गे चाति तथैव च।
भूमौ सर्वत्र तद्यातं न कुत्रापि स्थिरं हि तत्॥ २०॥
लोकाश्च व्याकुला जाता ऋषयस्तेऽति दु:खिता:।
न शर्म लेभिरे केचिद्देवाश्च ऋषयस्तथा॥ २१॥
दु:खिता मिलिताश्शीघ्रं ब्राह्मणं ययु:॥ २२॥
मुनीशांस्तांस्तदा ब्रह्मा स्वयं प्रोवाच वै तदा॥ ३१॥
आराध्य गिरिजां देवीं प्रार्थयन्तु सुरां शिवम्।
योनिरूपा भवेच्चेद्वै तदा तत स्थिरतां व्रजेत्॥ ३२॥
पूजित: परया भक्त्या प्रार्थित: शङ्करस्तदा।
सुप्रसन्नस्ततो भूत्वा तानुवाच महेश्वर:॥ ४४॥

सूत जी बोले—ऐसा उन ऋषियों के कहने पर उस अवधूत अद्भुत रूपधारी शिव का वह लिङ्ग उसी समय कट कर गिर पड़ा॥ १८॥ और वह कटा हुआ लिङ्ग अग्नि के समान जलने लगा, वह जहाँ-जहाँ जाता था, वहाँ-वहाँ आग लगा देता था॥ १९॥ वह लिङ्ग पाताल में, स्वर्गलोक में भी उसी प्रकार जलता हुआ भ्रमण करने लगा, कहीं पर भी स्थिर नहीं हुआ॥ २०॥ उससे सम्पूर्ण लोक व्याकुल हुए तथा वे ऋषि भी दु:खी हुए, कोई देवता या ऋषि कल्याण को प्राप्त नहीं हुए॥ २१॥ दु:खी हुए वे सब मिलकर शीघ्र ही ब्रह्माजी की शरण में गये॥ २२॥ तब ब्रह्माजी उन ऋषियों से स्वयं कहने लगे—हे देवताओ! देवी पार्वती की आराधना करके तत्पश्चात् शिवजी की प्रार्थना करो, यदि पार्वतीजी साक्षात् योनि रूपा हो जाएँ तो लिङ्ग स्थिरता को प्राप्त हो॥ ३२॥ उस समय पर भक्ति से पूजित और सत्कृत हुए शिव जी अति प्रसन्न होकर ऋषियों से बोले॥ ४४॥

शिव उवाच—

हे देवा: ऋषय: सर्वे मद्वच: शृणुतादरात्।
योनिरूपेण मल्लिङ्गं धृतं चेत्स्यात्तदा सुखम्॥ ४५॥

पार्वतीं च विना नान्या लिङ्गं धारयितुं क्षमा।
तया धृतं च मल्लिङ्गं द्रुतं शान्तिं गमिष्यति॥ ४६॥

सूत उवाच—

तच्छुत्वा ऋषिभिर्देवैस्सुप्रसन्नैर्मुनीश्वराः।
गृहीत्वा चैव ब्राह्मणं गिरिजा प्रार्थिता तदा॥ ४७॥
प्रसन्नां गिरिजां कृत्वा वृषभध्वजमेव च।
पूर्वोक्तं च विधिं कृत्वा स्थापितं लिङ्गमुत्तमम्॥ ४८॥

—शिवपुराण कोटि रुद्रसंहिता अ० १२

अर्थ—महादेव जी बोले, हे देवताओ व ऋषियो! आप सब मेरे वचन को आदर से सुनो। यदि मेरा लिङ्ग योनि रूप से धारण किया जायेगा तो शान्ति हो सकती है॥ ४५॥ मेरे इस लिङ्ग को पार्वती के बिना और कोई धारण करने में समर्थ नहीं है। पार्वती द्वारा धारण किया गया मेरा लिङ्ग शीघ्र शान्ति को प्राप्त होगा॥ ४६॥ सूतजी बोले, हे मुनीश्वरो! यह सुनकर देवता तथा ऋषियों ने ब्रह्माजी को साथ लेकर उस समय पार्वती से प्रार्थना की॥ ४७॥ पार्वती तथा शिवजी को प्रसन्न करके पूर्वोक्त विधि के अनुसार शिवलिङ्ग की स्थापना की गई॥ ४८॥

लिङ्ग के साथ वृषण भी कटे

शिवपुराण का एक खण्ड धर्मसंहिता के नाम से प्रसिद्ध है। वह बम्बई से एक बार छपा था, शिवपुराण में से अब उसे न मालूम क्यों पृथक् कर दिया गया है। उसमें लिखा है—

छित्वा सवृषणं लिङ्गं गुरुदाररतः स्वयं ॥ १८९॥
शिश्ने स्यात् कर्तनं कार्यं नान्यो दण्डः कदाचन॥ १९०॥

—धर्मसंहिता अ० १०

अर्थ—गुरु पत्नी (भृगु ऋषि की पत्नी) गामी शिव की उपस्थेन्द्रिय वृषण (अण्डकोष) के साथ कट कर गिरी थी। शिश्न काटने के अतिरिक्त उत्तम दण्ड ऐसे व्यक्ति के लिए और हो ही क्या सकता था।

शिवजी दारुवन में विष्णु को स्त्री बनाकर साथ ले गये थे

उपरोक्त दारुवन की दुर्घटना के सम्बन्ध में सौरपुराण ने कुछ

भिन्नतायुक्त निम्न प्रकार विवरण प्रस्तुत किया है—

एवं देव्या वचः श्रुत्वा भगवान्नीललोहितः।
विट्वेषमथाऽऽस्थाय ययौ दारुवनं प्रति॥ ४८॥
स्त्रीरूपधारी विष्णुश्च शङ्करेण समागतः।
विष्णुना सह विश्वेशो देव दारुवनौकसः॥ ४९॥
मोहयन्मायया शम्भुर्विचचार वने तदा।
मुनिस्त्रियः शिवं दृट्ष्वा मदनानलदीपिताः॥ ५०॥
त्यक्तलज्जा विवस्त्राश्च ययुस्ता अनुशङ्करम्।
स्त्रीरूपधारिणं विष्णुं सर्वे मुनि कुमारकाः॥ ५१॥
अन्वगच्छन्त देवर्षे कामबाणप्रपीडिताः।
तदद्भुतं तदा ज्ञात्वा कुपिता मुनयस्तदा॥ ५२॥
लिङ्गहीनं हर कृत्वा गोपीवेशधरं हरिम्॥ ५३॥

—सौरपुराण अ० ६९

अर्थ—देवी के वचन सुनकर शङ्कर जी व्यभिचारी पुरुष का रूप बनाकर दारुवन में गये॥ ४८॥ विष्णु जी स्त्री का रूप धर के शङ्कर जी के साथ-साथ गये॥ ४९॥ वन में जाकर शङ्कर जी ने अपनी माया फैलाई तो उसके प्रभाव से मुनियों की औरतें शिव को देखकर कामदेव की अग्नि से पीड़ित होकर॥ ५०॥ लज्जात्याग कर व कपड़े उतार कर (नङ्गी होकर) शङ्कर जी से जा चिपटीं तथा सारे मुनियों के जवान लड़के स्त्री रूपधारी विष्णु जी को देखकर॥ ५१॥ कामबाण से पीड़ित होकर उनसे जाकर भिड़ गये। इस अद्भुत दृश्य को देखकर क्रोधित होकर मुनियों ने शिवजी को लिङ्ग हीन कर दिया॥ ५२-५३॥

इस कथा को दो रूप में देखने पर हम को पता लगा कि शिवजी का दारुवन में जाकर ऋषि-पत्नियों से दुराचार करना, विष्णु का औरत बनकर शिव के साथ वहाँ जाना तथा ऋषि कुमारों का विष्णु जी से उनके स्त्री रूप में व्यभिचार करना, मुनियों के शाप से शिवजी की अण्डकोष सहित शिश्नेन्द्रिय का कट कर गिरना व उसमें आग प्रकट होना, कटे हुए शिश्न का सर्वत्र भागते-फिरना व आग लगना, शङ्कर जी के परामर्श से पार्वती का उसे योनि रूप में धारण करना तथा तभी से शिवलिङ्ग की पूजा जारी होना, यह सब शिवलिङ्ग (शिव मूत्रेन्द्रिय) पूजा

का प्रारम्भ बताता है। लखनऊ के छपे भाषा शिवपुराण के खण्ड ८। अ० १६ पर पृ० ७४८ से ७५० तक यही कथा दी है। उसमें प्रारम्भ में नारद जी ने ब्रह्माजी से शिवलिङ्ग पूजा का प्रारम्भ कब से हुआ है, यह पूछा है तो ब्रह्माजी ने दारुवन की सम्पूर्ण कथा बताते हुए अन्त में यह शब्द कहे हैं।

दारुवन की कथा भाषा शिव पुराण से

"शिवजी बोले—गिरिजा योनिरूप से लिङ्ग को धारण करे तो हम शान्त होंगे। गिरिजा के सिवाय तीन भुवनों में और कौन है, जो हमारे लिङ्ग को रोक सके। यह सुनके सब देवता आदि ने गिरिजा को प्रसन्न किया, जिसने योनिरूप होकर शिवजी का लिङ्ग धारण किया, जिससे सबको बड़ा आनन्द हुआ और सब ने बड़ी स्तुति की। पर माता-पिता को नग्न देखकर किसी ने उनकी पूजा नहीं की। पर जब शिवजी ने आज्ञा दी कि हमारे लिङ्ग की पूजा करो, तो सबने उसी दशा में पूजा की और उसी दिन से शिवलिङ्ग पूजा का चलन हो गया।"

इस सब विवरण को देखकर हम समझ सकते हैं कि मूत्रेन्द्रिय की पूजा का शिवलिङ्ग के रूप में प्रचार किया गया है तथा शिश्नेन्द्रिय पूजा को उचित सिद्ध करने के लिए यह सब कथाएँ गढ़-गढ़कर पुराणादि ग्रन्थों में लिखी गई हैं। यदि पुराणों की इन कथाओं को सत्य माना जायेगा तो शिवजी पर अनेक प्रकार के प्रश्न लागू होंगे, जिनका कोई उत्तर पुराणों को सत्य मानने वालों पर न बन सकेगा।

प्रश्न १—कटा हुआ शिवलिङ्ग क्या कभी पुनः शिवजी के शरीर में जोड़ा गया या नहीं।

प्रश्न २—पुराणों में शिवजी को शिखण्डी व षण्ढ क्या लिङ्गहीन होने से ही तो नहीं बताया गया है ?

प्रश्न ३—सती अनसूया के पास एवं दारुवन में व्यभिचारार्थ जब शिवजी गये तो निज लिङ्ग, उपस्थेन्द्रिय को हाथ में ग्रहण करके ही क्यों गये थे। क्या इससे शिवचरित्र का पतन सिद्ध नहीं होता ?

प्रश्न ४—गङ्गा को शिव तनया (शिवपुत्री) कहते हैं तो शिवपुत्री को शिवलिङ्ग पर चढ़ाना क्या बुद्धिमानी की बात है ?

प्रश्न ५—गङ्गा को मैया कहते हैं तो गङ्गा मैया को महादेव

बाबा के ऊपर चढ़ाना क्या यह मैया का बाबा के साथ दुराचार करना नहीं होगा।

प्रश्न ६—पराई स्त्रियों पर माया जाल डालकर उन्हें कामोत्तेजित कर देना और फिर उनके पतियों की अनुपस्थिति में व्यभिचार करना क्या यह सनातन धर्म का कोई विशेष अङ्ग है, जिसे पालन कराके शिवजी ने यह गन्दा आदर्श उपस्थित किया है।

प्रश्न ७—विष्णु जी को औरत बनाकर साथ में ले जाना तथा मुनियों के लड़कों का स्त्री रूपधारी विष्णु से व्यभिचार कराना क्या यही विष्णु के भगवान् होने का सच्चा प्रमाण है? विष्णु भगवान ने अपने साथ स्वेच्छा से व्यभिचार कराकर क्या भक्तों के लिए यह कोई अनुकरणीय आदर्श, उपस्थित किया है? और क्या यह कृत्य सनातन धर्म के अनुकूल माना जा सकता है? इसी प्रकार के अनेक प्रश्न पाठकों के मस्तिष्क में पैदा हो सकते हैं, जिनका जवाब पुराणों को सर्वथा सत्य मानने वालों को देना पड़ेगा।

शिवलिङ्ग पर बेलपत्र व जल चढ़ाने का रहस्य

शिवलिङ्ग पर जल भी केवल इसलिए निरन्तर छोड़ा जाता है कि उससे एक बार आग फूट निकली थी, जिसने त्रैलोक्य को भस्म कर डाला था, यदि पुनः कभी उसमें ज्वालामुखी फूट निकला तो अब कौन उसे धारण करेगा। पहले तो पार्वतीजी ने धारण कर लिया था, अब इतनी सामर्थ्य किस स्त्री में होगी, अतः कटे हुए शिवलिङ्ग की गर्मी शान्त बनी रहे इसके लिए हर समय शिवलिङ्ग पर पानी छोड़ने के लिए जल के घड़े उसके ऊपर रखे जाते हैं। भक्त लोग दूर-दूर से जल लाकर शिवलिङ्ग पर छोड़ा करते हैं। उन्हें हर समय उसी दारुवन में प्रकट हुई अग्नि का भय लगा रहता है, हमारे विचार से यदि जल छोड़ने का यही कारण हो तो शिवलिङ्ग युक्त मन्दिरों को नगर से बाहर जङ्गलों में स्थापित करना चाहिए, ताकि कभी गड़बड़ हो जाने पर भयभीत भक्त लोग सुरक्षित रह सकें, अथवा हर मन्दिर में फायर बिग्रेड (आग बुझाने के एञ्जिन) रखने चाहिए, ताकि समय पर आग ज्यादा न फैलने पाये।

शिवलिङ्ग पर जल और बेलपत्र चढ़ाने का आयुर्वेदिक कारण भी हो सकता है। जल की शीतल धारा शिश्नेन्द्रिय पर छोड़ने से

समस्त शरीर की गरमी नष्ट हो जाती है, सम्पूर्ण रोग मिट जाते हैं, वीर्यकोष की उष्णता दूर होकर प्रमेह मिटते हैं, वीर्य स्वस्थ बनता है। सम्भव है शिव के स्वास्थ्य के लिए यह डॉक्टरी क्रिया भक्त लोग किया करते हों। बेलपत्र भी वीर्य को पौष्टिक एवम् प्रमेह व मधुमेह नाशक होता है, इसके लिए बेलपत्र के चूर्ण को अथवा बेलपत्रों को घोटकर सेवन किया जाता है। आयुर्वेदीय चिकित्सकगण इसका बहुधा प्रयोग किया करते हैं। शिवलिङ्ग पर बेलपत्र भी सम्भवत: इसी विश्वास के आधार पर अन्धभक्त लोग चढ़ाते हैं कि शिवजी स्वस्थ रहें व उनका वीर्य पुष्ट होता रहे, पर वे यह नहीं समझ पाते हैं कि बेलपत्र खाने से प्रमेह नाशक एवं वीर्य पौष्टिक गुण करता है न कि शिश्नेन्द्रिय पर ऊपर से चढ़ाने से कोई लाभ होता है। जल चढ़ाने व बेलपत्र प्रमेह नष्ट करने को खाने का नुस्खा तो ठीक है, पर शिवलिङ्ग के सम्बन्ध में प्रयोग विधि दोनों ही गलत हैं। हमारे विचार में यदि शङ्कर जी की चिन्ता त्याग कर भक्त लोग अपने ऊपर ये दोनों चीजें प्रयोग करने लगें तो उनका स्वास्थ्य भी सँभल जाए तथा उनका गृहस्थ जीवन भी सुखमय बन जाए।

हमने प्रारम्भ में लिखा है कि शिव की कल्पना वाममार्गीय सम्प्रदाय ने की है, जिनमें व्यभिचार प्रधान धर्म माना जाता है, उन्होंने शिवजी के चरित्र को भी अपने सम्प्रदाय की मान्यताओं के साँचे में ढालने का प्रयत्न किया है। हम कुछ घटनाएँ पुराणों से और यहाँ उपस्थित करते हैं, जिनसे आपको हमारी उपरोक्त स्थापना की पुष्टि में प्रमाण मिलेगा।

मोहिनी अवतार की कथा तथा सोना व चाँदी की उत्पत्ति शिव वीर्य से

एक बार शिवजी ने विष्णु से अपना मोहिनी स्वरूप दिखाने को कहा तो विष्णु जी एकदम गायब हो गये। महादेवजी को सामने एक बाग में एक सुन्दरी स्त्री गेंद खेलती हुई नजर आई, उसने शङ्कर को तिरछी नजर से देखा। शङ्करजी कामान्ध हो गये और उसे पकड़ने को भाग पड़े। वह स्त्री भी भागी। वह आगे-आगे शिवजी उसके पीछे-पीछे भागे चले जा रहे थे। भागने में उस स्त्री के वस्त्र हवा में उड़ गये। वह सर्वथा नङ्गी हो गई और पेड़ों की आड़ में लाज के मारे छिपने लगी। शिवजी ने पीछे से

दौड़कर उसके सर का जूड़ा पकड़ लिया। अब थोड़े से श्लोक भी देखिए—

तयापहृतविज्ञानः तत्कृतस्मरविह्वलः।
भवान्याऽपि पश्यन्त्यागतह्रीस्तत् पदं ययौ॥ २५॥
सा तमायान्तमालोक्य विवस्त्रा व्रीडिता भृशम्।
निलीयमाना वृक्षेषु हसन्तीं नान्वतिष्ठत॥ २६॥
तामन्वगच्छद् भगवान भवः प्रमुषितेन्द्रियः।
कामस्य च वशं नीतः करेणुमिव यूथपः॥ २७॥
सोऽनुव्रज्यातिवेगेन गृहीत्वानिच्छतीं स्त्रियम्।
केशबन्धम् उपानीय बाहुभ्यां हरिः षस्वजे॥ २८॥

अर्थ—उस स्त्री ने शङ्करजी की बुद्धि हर ली, वे उसके हाव-भावों पर कामातुर हो गये और भवानी के सामने लज्जा छोड़कर उसकी ओर चल पड़े॥ २५॥ मोहिनी वस्त्रहीन तो पहले ही हो चुकी थी। शङ्कर को अपनी ओर आते देखकर बहुत लज्जित हो गई। वह शर्म के मारे एक वृक्ष से जाकर दूसरे वृक्ष की आड़ में जाकर छिप जाती और हँसने लगती, परन्तु ठहरती नहीं थी॥ २६॥ शङ्करजी की इन्द्रियाँ अपने वश में न रहीं। वे अत्यन्त कामोत्तेजित हो गये, अतः हथिनी के पीछे हाथी की तरह वे उसके पीछे-पीछे दौड़ने लगे॥ २७॥ उन्होंने अत्यन्त वेग से उसका पीछा करके पीछे से उसका जूड़ा पकड़ लिया और उसकी इच्छा न होने पर भी उसे दोनों भुजाओं में भरकर हृदय से लगा लिया॥ २८॥

सोपगूढा भगवता करिणा करिणी यथा।
इतस्ततः प्रसर्पन्ती विप्रकीर्णशिरोरुहा॥ २९॥
आत्मानं मोचयित्वाङ्ग सुरर्षभभुजान्तरात्।
प्राद्रवत् सा प्रथुश्रोणी माया देवविर्निर्मिता॥ ३०॥
तस्याऽसौ पदवीं रुद्रो विष्णोरद्भुतकर्मणः।
प्रत्यपद्यत कामेन वैरिणेव विनिर्जितः॥ ३१॥
तस्यानुधावतो रेतश्च स्कन्दामोघ रेतसः।
शुष्मिणो यूथपस्येव वासितामनुधावतः॥ ३२॥
यत्र तत्र पतत्मह्यां रेतस्तस्य महात्मनः।
तानि रूप्यस्य हेम्नश्च क्षत्रण्यां सन्महीपते॥ ३३॥

—श्रीमद्भागवत पु० स्क० ८। अ० १२

अर्थ—जैसे हाथी हथिनी का आलिङ्गन करता है, वैसे ही शङ्कर जी ने मोहिनी का आलिङ्गन किया। वह इधर-उधर खिसक कर छुड़ाने की चेष्टा करने लगी। उसी छीना-झपटी में उसके बाल बिखर गये॥ २९॥ उस देव निर्मित्त माया सुन्दरी ने किसी प्रकार शङ्कर की भुजाओं के पाश से अपने को छुड़ा लिया और बड़े वेग से भागी॥ ३०॥ शङ्कर जी उस मोहिनी वेषधारी विष्णुजी के पीछे-पीछे दौड़ते चले गये। उस समय ऐसा जान पड़ता था कि मानो उनके शत्रु कामदेव ने उनके ऊपर विजय प्राप्त कर ली है॥ ३१॥ कामुक हथिनी के पीछे दौड़ने वाले कामोन्मत्त मस्त हाथी के समान थे, मोहिनी के पीछे दौड़ रहे थे। यद्यपि भगवान शङ्कर जी का वीर्य अमोघ है, फिर भी मोहिनी की माया से वह स्खलित हो गया॥ ३२॥ शङ्करजी का यह वीर्य पृथिवी पर जहाँ-जहाँ गिरा वहाँ सोने चाँदी की खानें बन गईं॥ ३३॥

शिवजी की चारित्रिक दुर्बलता का यह भी एक दृष्टान्त हुआ। शिव वीर्य से सोने चाँदी की खानें बनने के सिद्धान्त की परीक्षा पौराणिक वैज्ञानिकों को विद्वान् की कसौटी पर कसके सिद्ध करनी चाहिए। वरना आज का पढ़ा लिखा जनसमुदाय इसे शिव को कलङ्कित करने के लिए वाममार्गीय पुराणकारों द्वारा रचित कोरी गल्प मानेगा। अथवा शिव को चरित्रवान् व्यक्ति मानना छोड़ देगा। इसी शिव वीर्य से हनुमान् जी की भी विचित्र पैदायश का नमूना देखिए।

शिव वीर्य से हनुमान् जी का जन्म

तद्वीर्यं स्थापयामासुः पत्रे सप्तर्षयश्च ते।
प्रेरिता मनसा तेन रामकार्यार्थमादरात्॥ ५॥
तैर्गौतमसुतायां तद्वीर्यं शम्भोर्महर्षिभिः।
कर्ण द्वारा तथाञ्जन्या रामकार्यार्थमाहितम्॥ ६॥
ततश्च समये तस्मात् हनूमानिति नामभाक्।
शम्भुर्जज्ञे कपितनुर्महाबलपराक्रमः ॥ ७॥

—शिवपुराण शतरुद्रसंहिता, अ० २०

अर्थ—मोहिनी के साथ हुए शुक्रपात को आदर से रामचन्द्र के अर्थ मन से शिवजी के द्वारा प्रेरणा किये हुए इन सप्त ऋषियों ने उस वीर्य को पत्ते पर रख लिया॥ ५॥ उन महर्षियों ने वह शिवजी का वीर्य गौतम की पुत्री के कान द्वारा अञ्जनी में रामचन्द्र

के कार्य के लिए प्रवेश किया॥६॥ उस समय उस वीर्य से महाबली तथा महापराक्रम युक्त वानर के शरीर वाले हनुमान् नामक शिवजी उत्पन्न हुए॥७॥

कान में डालकर शिव वीर्य से सन्तान उत्पन्न होने के विचित्र प्रकार पर डॉक्टरी के पौराणिक विद्यार्थियों को अपनी अनुसन्धान शालाओं में परीक्षण करने चाहिए।

इसी शिव वीर्य से वैद्यक ग्रन्थों में पारा पैदा होने की बात लिखी है।

शिव वीर्य से पारे की उत्पत्ति

शिवाङ्गात्प्रच्युतं रेतः पतितं धरणीतले।
तद्देहसारजातत्वाच्छुक्लमच्छमभूच्च तत्॥
क्षेत्रभेदेन विज्ञेयं शिववीर्यं चतुर्विधम्।
श्वेतरक्तं तथा पीतं कृष्णं तत्तु भवेत् क्रमात्॥

—भावप्रकाश निघण्टु

अर्थ—शिवजी का वीर्य पृथिवी पर गिरा, उससे पारा पैदा हो गया। वह पारा क्षेत्र भेद से सफेद, पीला, लाल व काला चार प्रकार का होता है।

मोहिनी के चक्कर में फँसकर शिव वीर्य गिरने से सोना, चाँदी, हनुमान् व पारा चार चीजें पैदा हो गईं। शिव वीर्य का महान् चमत्कार दिखाने के लिए पुराणकारों ने इस कथा का सविस्तार वर्णन किया है। इसी प्रकार गन्धक की भी विलक्षण उत्पत्ति लिखी है—

गन्धक की उत्पत्ति

श्वेतद्वीपे पुरा देव्याः क्रीडन्त्या रजसाप्लुतम्।
दुकूलं तेन वस्त्रेण स्नातायाः क्षीरनीरधौ॥
प्रसृतं यद्रजस्तस्माद् गन्धकः सनभूत्तदा॥

—भावप्रकाश निघण्टु

अर्थ—श्वेत द्वीप में पार्वती देवी पहले क्रीड़ा कर रही थीं। रजःकाल आने पर जब उसके वस्त्र रजःस्राव से भीग गये तो कपड़ों सहित उन्होंने क्षीर सागर में स्नान किया। उस समय उस वस्त्र से जो रज फैला, उससे गन्धक की उत्पत्ति हुई।

ये सब कथाएँ पौराणिक अन्धकार के युग में गढ़ी गल्पें हैं। लङ्का जाते समय हनुमान् के शरीर से पसीना गिरा, उसे मछली निगल गई तो उससे मकरध्वज नाम का लड़का पैदा हो गया, यह गल्प प्राकृतिक नियम के विपरीत तुलसीदास जी ने उड़ाई थी तो यहाँ पुराण व वैद्यक ग्रन्थकारों ने शिव व पार्वती के रज वीर्य से पारा, गन्धक, सोना, चाँदी की खान पैदा होना व हनुमान् जी की विचित्र उत्पत्ति की गल्प ठोक दी हैं। एक दृष्टि से यह भी उत्तम ही हुआ। यदि पुराणकार कहीं शिव वीर्य से शिवजी के सन्तानों की उत्पत्ति की गल्प ठोकता तो वह अरबों-खरबों से क्या कम होते? और फिर उनके विवाह शादी आदि कराने की व्यवस्था शिवजी से कराने में उसे सैकड़ों प्रकार की तुकबन्दी और लगानी पड़ती। इन पुराणकारों ने शिवजी को अधिक से अधिक कामुक सिद्ध करने में कोई कसर उठा नहीं रखी है। एक स्थान पर लिखा है—

इलावृत देश का हाल

जहाँ शङ्कर जी रहते हैं, वह इलावृत देश है। उस इलावृत देश में एकमात्र शङ्कर जी ही पुरुष हैं, श्री पार्वती के शाप को जानने वाला कोई दूसरा पुरुष वहाँ प्रवेश नहीं करता है, क्योंकि वहाँ जो भी मर्द जाता है, वह तुरन्त स्त्री बन जाता है। वहाँ पार्वती और उनकी अरबों-खरबों दासियों से सेवा कराने वाले शङ्करजी रहते हैं। —भागवत पुराण स्क० ५। अ० १७

इसलिए इस विषय में दूसरे पुराणकार ने लिखा है—

शिवजी हर समय कामिनी-पाश में बँधे रहते हैं

शिवोऽपि पर्वते नित्यं कामिनीपाशसंयुतः॥

—देवीभागवत स्क० १। अ० ११

अर्थ—पर्वत पर शिवजी नित्य ही कामिनियों के बाहुपाशों से फँसे रहते हैं।

शिव के पास अप्सराएँ क्रीड़ा करती हैं

रमाकोटिसहस्राणि हारकेयूरभूषिताः।
सर्वशृङ्गारशोभाढ्या नूपुररवालङ्कृता॥ ६॥
अक्षययौवना सर्वा उमया सदृशोपमा।
दिव्यवस्त्रपरिधानमहाभोगपरिच्छदाः॥ ७॥

सर्वभोगसमायुक्ताः क्रीडन्ति शिवसन्निधौ।
तावत्तिष्ठन्ति मेदिन्यां यावन्माक्षीरसागरे॥ ८॥

—केदारकल्प ३५

अर्थ—सहस्रों कोटि अप्सराएँ हार-बाजूबन्द आदि से भूषित नूपुर पहने सम्पूर्ण श्रृङ्गार की शोभा से युक्त॥ ६॥ अक्षय यौवन वाली पार्वती के सदृश दिव्य वस्त्र धारण किये (शिव के भोगने को) महाभोग सहित॥ ७॥ शिव के समीप क्रीड़ा करती हैं, जब तक पृथिवी तथा समुद्र में जल रहता है॥ ८॥

यह हमने उस शिवलोक के हाल का वर्णन किया जहाँ शिवजी रहते हैं। उनके पास अरबों-खरबों अप्सराएँ रहती हैं, वे शिव के साथ क्रीड़ा व आमोद-प्रमोद किया करती हैं। यदि कोई अन्य मर्द भूल से भी वहाँ पहुँच जाए तो वह तत्काल स्त्री बन जाता है। मर्दों को औरत बनने का शाप कब क्यों दिया गया, इसकी भी एक कथा है, जो नीचे दी जाती है—

मर्दों को औरत बनाने के शाप की कथा

एकदा गिरीशं द्रष्टुमृषयः सनकादयः।
दिशो वितिमिराभासा कुर्वन्तः समुपागमन्॥ १६॥
तस्मिंश्च समये तत्र शङ्करः प्रमदायुतः।
क्रीड़ासक्तो महादेवी विवस्त्रा कामिनी शिवा॥ १७॥
उत्सङ्गे संस्थिता भर्त्तू रममाणा मनोरमा।
तान्विलोक्याम्बिका देवी विवस्त्रा व्रीडिता भृशम्॥ १८॥
भर्त्तुरङ्कात्समुत्थाय वस्त्रमादाय पर्यधात्।
लज्जाविष्टा स्थिता तत्र वेषमानातिमानिनी॥ १९॥
ऋषयोऽपि तयोर्वीक्ष्य प्रसङ्गं रममाणयोः।
परिवृत्य ययुस्तूर्णं नरनारायणाश्रमम्॥ २०॥
ह्रीयुतां कामिनीं वीक्ष्य प्रोवाच भगवान् हरः।
कथं लज्जातुराऽसि त्वं सुखं ते प्रकरोम्यहम्॥ २१॥
अद्य प्रभृति यो मोहात्पुमान्कोऽपि वरानने।
वनं च प्रविशेदेतत्स वै योषिद्भविष्यति॥ २२॥

—देवीभागवत पु० स्क० १। अ० १२ तथा भागवत स्क० ९ अ० १

अर्थ—एक समय सनकादिक ऋषि शिवजी के दर्शन को

अपने प्रकाश से दिशाओं को निर्मल करते हुए आये। उस समय शिवजी पार्वती के साथ क्रीड़ा में आसक्त थे, कामिनी शिवा वस्त्रहीन थीं॥१८॥ वह शिवजी की गोदी में स्थित हुई रमण करती थीं। उन ऋषियों को देखकर देवी बड़ी लज्जित हुई और वे स्वामी की गोदी से उठकर जल्दी से वस्त्र धारण करने लगीं॥१८ व १९॥ ऋषि भी उन रमण करने वालों का प्रसङ्ग देखकर शीघ्र ही नर नारायण आश्रम को चले गये॥२०॥ तब पार्वती को लज्जित देखकर शिवजी बोले, तुम लज्जा क्यों करती हो? मैं तुम्हारे लिए सुख का प्रबन्ध करूँगा, आज से यदि कोई पुरुष भूलकर भी इस वन में आयेगा तो वह स्त्री बन जायेगा।

पुराणों की उपरोक्त बात के गल्प होने में क्या सन्देह हो सकता है। इस पृथिवी पर ऐसा देश भी क्या कहीं सम्भव है, जहाँ अरबों-खरबों औरतें रहती हैं और उनके बीच में केवल एक ही मर्द शङ्कर जी विद्यमान रहकर दिन रात रमण करते रहते हैं, पृथिवी की प्रायः ढाई अरब की आबादी में १ अरब औरतें नहीं हैं, पर पुराण बनाने वालों ने केवल एक पहाड़ी वन में अकेले शङ्कर जी के लिए अरबों-खरबों औरतें भागवत में पैदा कर दी हैं। पढ़े लिखे लोग शिव को महा व्यभिचारी बनाने वाले इन पुराण बनाने वालों की मूर्खता पर हँसेंगे। कितने आश्चर्य की बात है कि आज भी ज्ञान-विज्ञान के युग में जब पृथिवी का कोना-कोना हवाई सर्वेक्षण से छान डाला गया है, इस प्रकार की गप्पों से भरे हुए पुराणों को छाप-छाप कर उनका प्रचार करने वाली संस्थाएँ एवं पण्डित मण्डल आज भी भोली भाली धर्म प्राण जनता में ऐसा घासलेटी साहित्य प्रचारित करके उसे मूर्ख बनाने में निरन्तर प्रयत्नशील हैं। भागवत पुराण में स्कन्द ९ अ० १ में लिखा है कि राजा सुद्युम्न भूल से एक बार उस वन में चला गया तो वह तत्काल औरत वन गया, **उसका घोड़ा-घोड़ी बन गया** तथा साथ के नौकर सब औरत बन गये। इससे अनुमान होता है कि ऐसा देश इसी पृथिवी पर ही कहीं है। इन मिथ्या पुराणों को सही मानने वालों को इस पौराणिक गल्प को उस स्थान का पता लगाकर प्रमाणित करना चाहिए।

इसी प्रकार शिवजी के चरित्र को कलङ्कित करने के लिए

उनके वेश्यागमन की कला शिव पुराण में दी है। वेश्यागमन करने से शिवजी को 'वेश्यानाथ' के उपाधि से विभूषित किया गया है। कथा निम्न प्रकार है—

शङ्कर का वेश्यानाथ अवतार व वेश्यागमन

नन्दीश्वर बोले—हे तात! मैं परमात्मा शिव के वेश्यानाथ अवतार का आनन्ददायक वर्णन करता हूँ॥ १॥ पहले कोई नन्दिग्राम में अति सुन्दरी महानन्दा नाम की वेश्या रहती थी॥ २॥ एक समय उस वेश्या के घर स्वयं शिवजी वैश्य बनकर पहुँचे॥ ३॥ उस सेठ को आया हुआ देखकर सुन्दरी वेश्या ने बड़े आनन्द के साथ आदर सत्कार करके बड़े आदर से अपने स्थान पर बैठाया॥ १६॥ उसके हाथ में अति मनोहर कंकण देखकर लोभित हुई, वह वेश्या उस वैश्य से बोली॥ १७॥ महानन्दा बोली—यह रत्न जटित आपके हाथ में स्थित हुआ स्त्रियों के आभूषणों में उचित कङ्गन मेरे मन को लुभाता है॥ १८॥ शिवजी बोले—यदि इस दिव्य श्रेष्ठ कङ्गन ने तुम्हारा मन लुभाया है तो तुम प्रेम से इसे धारण करो। पर इसका मूल्य क्या दोगी॥ २०॥ वेश्या बोली—

वयं हि स्वैरचारिण्यो वेश्यास्तु न पतिव्रताः।
अस्मत्कुलोचितो धर्मो व्यभिचारो न संशयः॥ २१॥
यद्येतदखिल चित्तं गृह्णाति करभूषणम्।
एतत्त्रयमहोरात्रं पत्नी तव भवाम्यहम्॥ २२॥

वेश्या बोली—हम व्यभिचारिणी वेश्या हैं, पतिव्रता नहीं है, हमारे कुल का व्यभिचार कराना ही धर्म है, इसमें कुछ संशय नहीं है॥ २१॥ यदि यह हाथ का आभूषण आप मुझे दे देंगे तो मैं तीन दिन व रात तुम्हारी स्त्री बनकर रहूँगी॥ २२॥

शिव बोले—

तथास्तु यदि ते सत्यवचनं वीर वल्लभे।
ददामि रत्नवलयं त्रिरात्रं भव मे वधू॥ २३॥
एतस्मिन् व्यवहारे तु प्रमाणं शशिभास्करौ।
त्रिवारं सत्यमित्युक्त्वा हृदयं मे स्पर्श प्रिये॥ २४॥

हे वीर वल्लभे! बहुत अच्छा यदि तेरा वचन सत्य है तो अपना रत्नों का कङ्गन तुझे देता हूँ। तुम तीन दिन व रात मेरी

स्त्री रहो॥ २३॥ हे प्रिये! इस व्यवहार में चन्द्रमा व सूर्य साक्षी हैं। तीन बार सत्य वचन कह कर मेरे हृदय को स्पर्श करो॥ २४॥

वेश्या बोली—

दिनत्रयमहोरात्रं पत्नी भूत्वा तव प्रभो।
सहधर्मे चरामीति सत्यं सत्यं न संशयः॥ २५॥

नन्दी बोला—

इत्युक्त्वा हि महानन्दा त्रिवारं शशिभास्करौ।
प्रमाणीकृत्य सुप्रीत्या सा तद्हृदयमस्पृशत्॥ २६॥
सा तेन संगता रात्रौ वैश्येन विटधर्मिणा।
सुखं सुष्वाप पर्यङ्के मृदुतल्पोपशोभिते॥ ३०॥

—शिवपुराण शतरुद्र संहिता अ० २६

अर्थ—वेश्या बोली—हे प्रभो तीन दिन व तीन रात तुम्हारी भार्या होकर तुम्हारे साथ विषय करूँगी, इसमें कुछ संशय नहीं है॥ २५॥ नन्दीश्वर बोले—यह महानन्दा वेश्या ने तीन बार सत्य-सत्य कह सूर्य चन्द्र को साक्षी कर प्रसन्नतापूर्वक उस वैश्य के हृदय को स्पर्श किया॥ २६॥ तब वह वेश्या उस व्यभिचारी वैश्य (शिव) के साथ रात्रि में मिलकर कोमल गद्दे व तकिये वाले सुन्दर पलङ्ग पर चैन के साथ सानन्द सो गई॥ ३०॥

वेश्यागमन के ही समान पुराणों में शिवजी पर अप्राकृतिक व्यभिचार का भी दोष लगाया है। हम एक उदाहरण उसका भी पुराण से ही उपस्थित करते हैं—

आडि वध की कथा

अन्धक दैत्य शिवजी का बेटा था। उसे शिवजी ने हिरण्याक्ष दैत्य को गोद दे दिया था। हिरण्याक्ष को वाराह अवतार लेकर विष्णु ने मार डाला था। उसके बाद अन्धक को गद्दी मिली थी, अन्धक से शिवजी का युद्ध हुआ। शिवजी ने बड़ी कठिनता से अन्धक को मार पाया था। यह कथा शिव पुराण रुद्र संहिता युद्ध खण्ड में विस्तार से दी गई है। अन्धक के मरने के बाद उसके पुत्र आडि ने शिवजी से पिता की मृत्यु का बदला लेने का निश्चय किया, एक दिन वह शिवजी के यहाँ गया। पार्वती वहाँ पर नहीं थीं। उसने पार्वती का वेष बना लिया। बातचीत में शिवजी को पता चल गया कि वह पार्वती नहीं है, वरन् दैत्य पुत्र आडि है

तो शिवजी ने अपनी शिश्नेन्द्रिय पर वज्र रखकर उसके साथ सम्भोग किया—

मेढ्रे वज्रास्त्रमादाय दानवं तं शातयत्।
अबुध्यद्वीर को नैव दानवेन्द्रं निषूदितम्॥ ३७॥

—नवलकिशोर प्रेस लखनऊ का सटीक मत्स्यपुराण अ० १५५

अर्थात्—शिवजी ने अपनी शिश्नेन्द्रिय पर वज्रास्त्र को रख कर उस दैत्य पुत्र के साथ सम्भोग किया, जिससे वह मर गया।

शिवजी के चरित्र पर चाहे पुराणकारों की या उसके मानने वाले पौराणिक पण्डितों की दृष्टि में उपरोक्त घटना आभूषण हो पर वर्तमान युग में यह घटना शिवचरित्र पर काला धब्बा लगाती है और यदि पुराण वर्णित इस घटना को सत्य माना जाये तो प्रश्न होता है कि क्या अप्राकृतिक व्यभिचार के आदि प्रचारक शङ्करजी तो नहीं थे? क्या वज्रास्त्र के उपयोग करने का यह भी वैध प्रकार था? शिवजी दैत्य पुत्र को गला घोटकर क्या नहीं मार सकते थे? उनका अमोघ अस्त्र त्रिशूल उस समय कहाँ चला गया था? हमारे विचार से ये सब गन्दी घटनाएँ वाममार्गीय लोगों की धूर्ततापूर्ण कल्पनाएँ हैं। इनको पुराणों में से निकाल देना चाहिए और यदि शिवजी द्वारा किया गया यह काण्ड सत्य घटना है तो शिवजी को पतित साबित करने के लिए यह एक बड़ा भारी सबूत है। **पौराणिको! या तो पुराणों का संशोधन करो, वरना शिव का चरित्र कलङ्कित होने से बचाया नहीं जा सकेगा।**

इसी प्रकार ब्रह्मवैवर्त में एक कथा दी है कि एक बार विष्णुजी गणेश जी को देखने को शिवजी के घर गये। वहाँ पार्वती जी विष्णु के सौन्दर्य को देखकर उन पर मुग्ध हो गईं। शिवजी ने जब यह चरित्र देखा तो पार्वती से कहा—

शङ्कर का पार्वती को विष्णु से कुकर्म कराने का आदेश—

दुर्गाञ्च निर्जनीभूय तमुवाच हरःस्वयम्।
बोधयामास विविधं हितं तथ्यम् अखण्डितम्॥ १६०॥
निवेदनं मदीयं च निबोध शैलकन्यके ।
श्रृङ्गारं देहि भद्रं ते हरये परमात्मने ॥ १६१॥

अर्थ—पार्वती को एकान्त में बुलाकर शिवजी ने स्वयम् अनेक प्रकार के अकाट्य एवं हितकारी वाक्यों का बोध कराया और कहा॥ १६०॥ हे पार्वती, तेरा कल्याण हो। तू मेरे निवेदन

को सुन और विष्णु को श्रृङ्गार दान दे दे॥ १६१॥

इस पर पार्वती ने कहा—

तव वाक्यं महादेव पालयिष्यामि सर्वथा।
देहान्तरे जन्मलब्ध्वा भजिष्यामि हरिं हर॥ १६७॥

—ब्रह्मवैवर्त पु० कृष्णजन्म खं० अ० ६

अर्थ—हे शङ्कर जी! आपकी बात को मैं अवश्य पालन करूँगी और दूसरे जन्म में मैं विष्णु को प्राप्त करूँगी।

पुराण में आगे लिखा है कि पार्वती ने इस प्रतिज्ञा को पूरा कर दिया था।

यह घटना शिवजी की चारित्रिक श्रेष्ठता एवं पार्वती के पर-पुरुष से बचने एवम् उसके पतिव्रत धर्म का खुला उपहास नहीं तो क्या है? क्या कोई भी भला आदमी अपनी पत्नी को पर-पुरुष से शौकिया सम्भोग कराने को आग्रह कर सकता है? हमारे विचार से कोई भी भारतीय नारी ऐसी बात कहने वाले पति के सर पर चप्पल मारते-मारते एक भी बाल नहीं रहने देगी। मगर पार्वती ने शिवजी का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया, क्योंकि वह स्वयं विष्णु पर आसक्त थीं। पौराणिक शिव पार्वती की महिला निराली है। इसी प्रकार शिवजी ने एक स्त्री को अपने अण्डकोष खाने का आदेश दे दिया था। कथा इस प्रकार है—

शिवदूती को अण्डकोष खाने का आदेश

एक बार शिवजी ने दावत की। दावत समाप्त हो गई। उसके बाद वहाँ शिवदूती आई। उसे वहाँ आने में देर हो गई थी। इधर शिवजी की भोजन सामिग्री समाप्त हो गई थी तो उन्होंने शिवदूती को आदेश दिया—

आस्वादितं न चान्येन भक्ष्यार्थे च ददाम्यहम्॥ १२५॥
अधोभागे च मे नाभेर्वतुलौ फलसन्निभौ।
भक्षयध्वं हि सहितलम्बौ मे वृषणाविमौ॥ १२६॥
अनेन चापि भोज्येन परातृप्तिर्भविष्यति॥ १२७॥

—पद्मपुराण सृष्टि खण्ड ६। अ० ३१

अर्थ—अन्यों ने जिसका स्वाद नहीं लिया है, भोजन के लिए मैं देता हूँ। मेरी नाभि के नीचे दो गोल फल के सामान आलम्ब सहित (उपस्थेन्द्रिय सहित) दो वृषण हैं, उनको खाओ। इस भोज्य वस्तु से पूर्ण तृप्ति हो जायेगी।

एक गैर स्त्री को भोजन के स्थान पर अण्डकोष (वृषण) व लिङ्ग खाने का आदेश देना शङ्करजी के लिए शोभा की बात है या कलङ्क की? यह निर्णय करना हम पाठकों के ऊपर छोड़ते हैं। पौराणिक ग्रन्थों की अधिकांश बातें ऐसी बेतुकी हैं, जिन्हें पढ़कर विधर्मी सदा हिन्दू धर्म की मजाक बनाते रहते हैं। इसी प्रकार वाल्मीकि रामायण में लिखा है।

शङ्कर का १०० वर्ष तक पार्वती से रति करना

दृष्ट्वा च भगवान् देवीं मैथुनायोपचक्रमे।
तस्य संक्रीडमानस्य महादेवस्य धीमतः।
शितिकण्ठस्य देवस्य दिव्यं वर्षशतं गतम्॥ ६॥

—वाल्मीकि रामायण बालसर्ग ३६

अर्थ—विवाह के उपरान्त पार्वती देवी को देखकर शङ्कर उनके साथ मैथुन करने लगे और उस मैथुन को करते हुए सौ वर्ष बीत गये, परन्तु

न चापि तनयो राम तस्यामासीत् परन्तप॥

—वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड सर्ग ३६

अर्थ—उस महा मैथुन से भी पार्वती के कोई पुत्र नहीं हो सका।

शिवजी का १००० साल तक पार्वती से रमण करना

मत्स्यपुराण अ० १५७ में तथा शिवपुराण रुद्र सं० कुमार खण्ड अ० १। श्लोक १५ में लिखा है कि शिवजी पार्वती के साथ १००० दिव्य वर्षों तक निरन्तर रमण करते रहे।

इन प्रमाणों से शिवजी के अत्यधिक विषयी होने का प्रमाण मिलता है। साथ ही यह भी ज्ञात होता है कि शिवजी के पार्वती की कोख से कोई औलाद न हो सकी थी अथवा यह मानना चाहिए कि पौराणिक ग्रन्थकारों ने जहाँ शिवजी को अत्यधिक विषयी लिखा है, वहाँ उनकी सम्भोग शक्ति को भी अत्यधिक दिखाने के लिए शिव-पार्वती की सहस्त्र वर्ष पर्यन्त विषय करने की कल्पना की है, जनता के सामने शिव को ऊँचे चरित्र का व्यक्ति या देवता प्रस्तुत करने के स्थान पर पुराणकारों ने उसे ऊँचे दर्जे का विषयी, व्यभिचार प्रचारक, अत्यधिक स्त्रियों वाला एवम्

अत्यन्त भयानक व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत किया है। आज जितने तान्त्रिक, शैव-शाक्त, वाममार्गी, दुर्गा के भक्त, देवी के पूजने वाले भैरव काली के उपासक आदि सम्प्रदाय वाले लोग हैं, वे सभी शिव-पार्वती=दुर्गा भैरव-काली आदि के रूप में (शिव पार्वती को) बड़े कुत्सित रूप में जनता के सामने रखते हैं, उन पर बकरे, भैंसे आदि पशु काटते हैं, शराब, गाँजा, भाङ्ग आदि का सेवी उन्हें बताते हैं। अपनी भी आकृतियाँ भयानक बनाये फिरते हैं। भस्म लपेटे त्रिपुण्ड्र तिलक लगाये हड्डियों के ढेर धारण किये मुर्दों की खोपड़ी हाथों में लिये, चिमटा, डमरू—मोरपंखी धारण किये, बम-बम आदि शब्द चिल्लाते ये लोग सर्वत्र देखे जा सकते हैं।

यदि शिव को इन लोगों की कल्पना व कथनानुसार हम ऐसा ही मान लेवें जैसा पुराणों में लिखा है तो हम निःसंकोच यह कहने पर विवश हैं कि यह शिव जी दुराचार का गन्दा आदर्श पेश करता है, कभी भी वैदिक धर्म का ईश्वर नहीं माना जा सकेगा। इस शङ्कर को मानने से हमारे देश में घोर व्यभिचार का प्रसार हुआ है। इन्हीं तान्त्रिकों एवं वाममार्गियों ने शिव के वीर्य तक को पीने का विधान 'केदारकल्प' पुराण में किया है, हम ग्रन्थ विस्तार भय से उन सब बातों को यहाँ नहीं देना चाहते हैं। शिव के सम्पूर्ण चरित्र में हमको एक भी आदर्श बात देखने को नहीं मिल सकी। जब हम पुराणों में देखते हैं कि शिव लोक में शिव जी हर समय कामिनी पाशों में फँसे रहते हैं। असंख्य औरतें उन्हें हर समय घेरे रहती हैं तो हमें सोचना पड़ता है कि क्या शिवजी को चौबीसों घण्टे सिवाय स्त्रियों में व्यभिचार द्वारा ऐन्द्रिक विषय भोग भोगने के और कोई काम धन्धा शेष नहीं है? हमने मत्स्यपुराण में एक स्थान पर देखा है कि पार्वती जी ने इसीलिए शिवजी को लम्पट शब्द से सम्बोधित किया है और निम्न शब्द उनके लिए प्रयोग किये हैं—

शङ्कर के लिए लम्पट व धूर्त शब्दों का प्रयोग

'एष स्त्रीलम्पटो देवी'—(मत्स्यपु० अ० १५४। श्लोक ३१)
अर्थात्—यह (शिव) परनारियों के लम्पट हैं।

एक अन्य पुराण—'महा भागवतकार' ने शिवजी के उपनामों में उनके लिए 'धूर्त' शब्द का प्रयोग अ० ६७। श्लोक १५ में किया।

'व्याघूर्णयतो धूर्तो व्याघ्रचर्माम्बवृतः ॥'

यह सब शङ्कर के बीभत्स स्वरूप दूषित आचरणों के कारण हुआ है। शङ्कर का वास्तविक चरित्र एवं स्वरूप क्या था या क्या हो सकता है, इसे जनता के सामने रखने के लिए हमारे या किसी भी अन्य अन्वेषक के पास केवल पुराणों का ही साहित्य है, पुराणों में ही गाथाएँ संगृहीत की गई हैं जो कि लगभग सारी की सारी शङ्कर को अत्यन्त पतित एवं घृणा के योग्य सिद्ध करती हैं। यह निर्णय करना पुराणों के मानने वाले विद्वानों का कार्य है कि शङ्कर से सम्बन्धित गाथाएँ सत्य हैं या मिथ्या हैं। हम यदि उनको मिथ्या कपोल कल्पित घोषित करते हैं तो भी पौराणिक विद्वान् उन्हें सत्य ही मानते रहेंगे। पुराणों के कारण समस्त फर्जी पौराणिक देवताओं के चरित्रों पर सदैव आक्षेप होते रहे हैं। पौराणिक विद्वान् उल्टे सीधे तरीके से कोशिश करके सदैव उनके दुश्चरित्रों का समर्थन ही किया करते हैं। कभी किसी पौराणिक उत्तरदायित्वपूर्ण संस्था ने पुराणों को गलत एवं संशोधन योग्य घोषित नहीं किया है, अतः हमने उनके आधार पर शङ्करचरित्र को प्रस्तुत करते हुए आपको बताया है कि किसी भी रूप में अनुकरणीय एवं उपासना योग्य देवता नहीं है। एक पुराणकार ने तो डङ्के की चोट पुराणों को धूर्तों के बनाये ग्रन्थ तक लिख दिया है।

पुराण बनाने वालों को धूर्त बताया है

प्राप्ते कलावहह दुष्टतरे च काले।
न भत्वा भजन्ति मनुजा ननु वञ्चितास्ते॥
धूर्तैः पुराणचतुरैः हरिशङ्कराणाम्।
सेवापराश्च विहतास्तव निर्मितानाम्॥

—देवीभागवत स्क० ५। अ० १९

अर्थात्—हे देवी! दुष्टतर इस घोर कलियुग में लोग तेरा भजन नहीं करते हैं। बल्कि धूर्त पुराण बनाने में चतुर लोगों ने शिव और विष्णु की पूजा की श्रेष्ठता लिख मारी है और लोगों को तेरी सेवा से वञ्चित कर दिया है। यहाँ धूर्त शब्द बहुवचन में प्रयुक्त हुआ है, जो यह सिद्ध करता है कि पुराण बहुत से धूर्त लोगों ने बनाये हैं। किसी एक व्यक्ति के बनाये हुए नहीं हैं।

पुराण बनाने वालों को उपाधियाँ

पौराणिको नाम व्यभिचारदोषो, न शङ्कनीयः कृतिभिः कदाचित्।
पुराणकर्ता व्यभिचारजातः, तस्यापि पुत्रो व्यभिचारजातः॥

—सुभाषितरत्न भाण्डागार

अर्थ—पुराण में व्यभिचार का दोष भरा पड़ा है, इसमें कोई शङ्का नहीं करनी चाहिए। पुराण बनाने वाला व्यभिचारी से पैदा हुआ था, उनकी औलाद भी व्यभिचार से पैदा हुई थी।

भ्रष्ट लोग भागवत पढ़ते हैं

वेदैर्विहीनाश्च पठन्ति शास्त्रं, शास्त्रेण हीनाश्च पुराणपाठाः।
पुराणहीनाः कृषिणो भवन्ति, भ्रष्टास्ततो भागवता भवन्ति॥

—अत्रिस्मृति श्लोक ३८२

अर्थ—जो लोग वेद नहीं पढ़ सकते, वे शास्त्र पढ़ते हैं। जो शास्त्रों को भी नहीं पढ़ सकते वे खेती करते हैं और जो 'महा-भ्रष्ट लोग खेती भी नहीं कर सकते वे जहाँ-तहाँ भागवत बाँचते फिरते हैं।'

इन चन्द प्रमाणों से स्पष्ट है कि भागवतादि पुराण कोई उत्तम ग्रन्थ नहीं हैं। इन पुराणों की रचना घोर साम्प्रदायिक लोगों ने मानव जाति में पाखण्ड प्रसार करके उसे लूटने खाने के लिए तथा इन ग्रन्थों का प्रमाण देकर उसे मूर्ख बनाने के लिए की थी। यह बात हम ही नहीं कहते हैं, वरन् पुराण में इसके लिए स्पष्ट प्रमाण विद्यमान हैं कि उस समय के ब्राह्मण वर्ग ने स्वार्थान्ध होकर नाना प्रकार के मतमतान्तर जनता को गुमराह करने के लिए चलाये थे। महाभारत के बाद देश की पतित दशा में उस समय के धर्माचार्यों की क्या स्थिति थी, यह पुराणकार के ही शब्दों में देखिये। **आजकल के वे पौराणिक विद्वान् जो स्वार्थान्ध होकर जनता को धर्म के नाम पर कुमार्गगामी बनाते व नये-नये सम्प्रदाय चलाते रहते हैं, व आर्यसमाज को बुरा भला कहते हैं, वे इस दर्पण में अपना मुँह देखें—**

पौराणिक पण्डितों का सच्चा स्वरूप

पूर्वं ये राक्षसा राजन् ते कलौ ब्राह्मणाः स्मृताः॥४२॥
पाखण्डनिरताः प्रायो भवन्ति जनवञ्चकाः।
असत्यवादिनः सर्वे वेदधर्मविवर्जिताः ॥४३॥

दाम्भिका लोकचतुरा मानिनो वेदवर्जिताः ।
शूद्रसेवापराः केचित् नाना धर्मप्रवर्तकाः ॥ ४० ॥
वेदनिन्दाकराः क्रूराः धर्मभ्रष्टातिवादुकाः ।
शूद्रधर्मरता विप्राः प्रतिग्रहपरायणाः ॥ ४७ ॥

—देवीभागवत स्क० ६ । अ० ११

अर्थ—हे राजन्! पूर्व काल में जो राक्षस थे वे ही कलियुग के ब्राह्मण हैं। जो पाखण्डी, ठग, असत्यवादी, सारे के सारे वेद के विरोधी, दम्भी लोक व्यवहार में चतुर अभिमानी वेदों से वर्जित शूद्रों की सेवा करने वाले शैव वैष्णव आदि धर्म (सम्प्रदाय) चलाने वाले, वेदनिन्दक (नास्तिक), धर्म से सर्वथा भ्रष्ट, अति क्रूर और अत्यन्त बकवादी होते हैं। शूद्रों के धर्म कर्म में लगे रहते हैं और दान लेने में चतुर होते हैं।

पुराण पाठक का—
पूर्ण बहिष्कार करने का आदेश

ज्योतिर्विदो ह्याथर्वाणः कीराः पौराणपाठकाः ।
श्राद्धे यज्ञे महादाने वरणीयाः कदाचन ॥ ३३ ॥
यज्ञे च फलं हानिः स्यात् तस्मात्तान् परिवर्जयेत् ॥ ३८४ ॥

—अत्रिस्मृति

अर्थ—ज्योतिषी, अथर्ववेदीय कीर तथा पुराण पढ़ने वाले ब्राह्मणों को यज्ञ, दान व श्राद्ध में नहीं बुलाना चाहिए, श्राद्ध में इनको बुलाने वाले के पितर नरक में जाते हैं तथा दान का फल निष्फल हो जाता है और यज्ञ का फल भी नष्ट हो जाता है।

पौराणिक विद्वान् देखें और सोचें कि इन पुराणों व स्मृतियों में जिन्हें वे शास्त्र मानते हैं, किस कदर उनकी निन्दा की है। क्या पौराणिक विद्वानों में साहस है कि वे इन पुराणों का हमारी तरह बहिष्कार करने की घोषणा कर सकें।

इन प्रमाणों को देने से हमारा तात्पर्य यह दिखाना है कि धर्म के विषय में पुराणों को प्रामाणिक नहीं मानना चाहिए और न मिथ्या देवताओं के चक्कर में पड़कर मानव जीवन को खराब करना चाहिए। **पौराणिक विद्वानों को भी चाहिए कि वे पुराणों को त्याग कर वेदों के स्वाध्याय में प्रवृत्त होवें।** इन पुराणों का रचना-काल महाभारत के बहुत बाद से अंग्रेजों के भारत में

आगमन तक है। हम चन्द प्रमाण इस विषय में उपस्थित करते हैं—

पुराणों में अंग्रेजी

रविवारे च सण्डे च फाल्गुने चैत्र फरवरी।
षष्टिश्च सिक्सटी ज्ञेया तदुदाहरणमीदृशम्॥ ३७॥

—भविष्यपुराण प्रतिसर्ग ख० १। अ० ५

अर्थ—रविवार को सण्डे, फाल्गुन को फरवरी तथा साठ को सिक्सटी अंग्रेजी में कहते हैं। यह अंग्रेजी का उदाहरण है। इसी प्रकार—बाबर, तेमूरलङ्ग, हुमायुँ, अकबर, रैदास, मीरा, बीरबल, तुलसीदास, कबीरदास, सूरदास, शिवाजी, तानसेन आदि का वर्णन भविष्यपुराण प्रतिसर्ग खं० ४। अ० २२ में सविस्तार किया गया है, प्राय: सारे ही पुराणों में बौद्ध व जैन धर्म का विशद खण्डन किया गया है। इन बातों से पुराणों के रचना काल का पाठक अनुमान लगा सकते हैं।

पुराण शूद्रों के लिए बने हैं

विशेषतश्च शूद्राणां पावनानि मनीषिभि:॥ ५४॥
अष्टादश पुराणानि चरितं राघवस्य च॥ ५६॥

—भविष्यपुराण ब्राह्म पर्व अ० १

अर्थ—१८ 'पुराण और रामचरित्र (रामायण) विशेष कर शूद्रों (मूर्खों) को पवित्र करने के लिए बनाये गये हैं।' इससे सिद्ध है कि पुराण व रामायण ब्राह्मण क्षत्रिय व वैश्यों के लिए न होकर केवल शूद्रों (अशिक्षितों) को ठगने खाने के लिए बनाये गये हैं, अत: अन्य तीनों वर्णों व शिक्षित वर्ग को इनका बहिष्कार कर देना चाहिए।

क्या शिवजी ने कामदेव को भस्म किया था

शङ्कर के बारे में बहुधा यह कहा जाता है कि उन्होंने कामदेव को भस्म कर दिया था। इस विषय में अनेक प्रकार की कहानियाँ भी गढ़ ली गई हैं पर हमारा कहना है कि शिवजी के जीवनचरित्र की घटनाओं को देखकर कोई भी व्यक्ति इस बात पर विश्वास नहीं कर सकता है, कामदेव के प्रभावों को योगी-संयमी व ब्रह्मचारी जन ही जीत सकते हैं। शिव का जीवन तो पुराणों के अनुसार अत्यधिक कामुक, शृङ्गार रस से पूर्ण एवं विलासितामय रहा है। जिसके हमने चन्द उदाहरण गत पृष्ठों में

दिए हैं—

कहा जाता है कि शिवजी कैलाश पर रहते हैं और वह कैलाश हिमालय पर्वत पर है। यह भी अन्ध विश्वासी धर्म भक्त जनता को बहकाने के लिए पौराणिक विद्वानों द्वारा उड़ाई गई बे-सर-पैर की गल्प हैं, क्योंकि गीता प्रेस गोरखपुर के प्रकाशित ग्रन्थ में इस प्रकार लिखा है—

वैकुण्ठ और कैलाश की स्थिति का निर्णय

वैकुण्ठ धाम पृथिवी से १६ करोड़ योजन ऊपर स्थित है। जहाँ सबको अभयदान करने वाले साक्षात् भगवान् लक्ष्मी पति निवास करते हैं। वैकुण्ठ की अपेक्षा १६ गुनी ऊँचाई पर शिवजी का निवास स्थान कैलाश धाम अवस्थित है। जहाँ गिरिराज नन्दिनी उमा, गणेश जी, कार्तिकेयजी तथा नन्दी आदि के साथ कल्याण स्वरूप भगवान् विश्वनाथ (शिवजी) विराजमान हैं।

—संक्षिप्त स्कन्धपु० काशी खण्ड पूर्वार्ध पृष्ठ ५७९

एक योजन बराबर चार कोस के होता है। इस प्रकार पृथिवी से १० अरब २४ करोड़ कोस यानी प्रायः २० अरब मील ऊपर आकाश में कहीं शिवजी अपने कुनबे के साथ रहते हैं। हमारे भोले पौराणिक बन्धु मन्दिरों में घण्टे पीटते-पीटते थक जाएँ 'नमः शिवायः' चिल्लाते-चिल्लाते मर भी जाएँ तो भी विष्णु, शङ्कर या गणेशजी उनकी पुकार नहीं सुन सकते। स्कन्द पुराण के इस लेख पर एक प्रश्न पैदा होता है। यह जमीन प्रतिक्षण घूमने से आकाश में अपनी स्थिति बदलती रहती है। प्रातःकाल जो तारे हमारे सर पर होते हैं, दोपहर को हमारा सर उनसे हटकर दूसरे तारों की सीध में हो जाता है। सायंकाल व रात्रि में हम नई दिशा में होते हैं और प्रातःकाल जमीन घूमकर हमें पुनः पहले की दशा में लाकर खड़ा कर देती है। इस प्रकार आकाश की और हमारी स्थिति प्रतिक्षण बदलती रहती है। पुराणकार लिखता है कि विष्णु लोक व कैलाश इतनी ऊँचाई पर हैं। यहाँ 'ऊपर' शब्द का कोई अर्थ नहीं है जब तक कि सूर्य की अपेक्षा से समय व दिशा का निर्देश न किया जाए। स्पष्ट है कि पुराणकार की यह गप्प अधूरी है, क्योंकि उसे ज्ञान नहीं था कि पृथिवी के घूमते रहने से 'ऊपर' की दिशा हर समय बदलती रहती है।

फिर ऐसे दूर रहने वाले विदेशी देवता की पूजा से लाभ भी

क्या है, **जो १०००० साल** तक पार्वती के साथ विषय भोग में तल्लीन रहा करे जैसा कि पुराण में लिखा है और उस व्यसन में फँसे रहने के कारण दिन रात पुकारने वाले अपने भक्तों की खबर भी न ले सके। जिस बुलन्द तकदीर वाले शङ्कर को अरबों-खरबों बेहद खूबसूरत औरतें (बकौल भागवत पुराण के) हर समय घेरे फिरती हों, वह इस जमीन के काले कलूटे जीने मरने वाले पौराणिक हिन्दुओं की क्या परवाह करेगा। खामखां यह लोग शङ्कर पर मोहित होकर लिङ्ग पूज-पूज कर अपना जीवन बरबाद करते हैं। **जब शिवजी सर्वव्यापक एवं घट-घटवासी नहीं हैं तो अपने भक्तों को हृदय की बात भी नहीं जान सकते हैं। फिर ऐसे तथाकथित देवता का ध्यान करने से लाभ ही क्या है?** ईसाइयों का खुदा चौथे आसमान पर, मुसलमानों का खुदा सातवें आसमान पर रहता है तो हमारे पुराणों का खुदा शङ्कर प्रायः २० अरब मील ऊँचा आसमान में निवास करता है। आखिर हमारे पौराणिक लोग फर्जी खुदा (देवता गण) ईसाई व मुसलमानों के खुदाओं से किसी बात में कम क्यों रहें। बहुत सम्भव है कि यह गप्प भी यवनों के खुदा से अपने देवता को ऊँचा सिद्ध करने को स्कन्द पुराण में गढ़ी गयी हो। सच्चाई क्या है, यह पुराणों को मानने वाले या उनकी प्रकाशक पौराणिक संस्थाएँ अथवा शिवलिङ्ग पूजने वाले भक्त लोग बता सकेंगे, क्योंकि सम्भव है, उन्होंने वास्तविकता की तहकीकात कर ली होगी।

एक विचित्र मूर्त्ति

भारत में शिव मन्दिर में प्रायः दो प्रकार की मूर्त्तियाँ मिलती हैं। एक तो गोल लम्बी जो शिवलिङ्ग कही जाती हैं। दूसरी चार मुँह वाली मूर्त्ति होती है। यह सिद्ध किया जा चुका है कि जलहरी में शिवलिङ्ग को स्थापित करके पूजा जाता है पर बहुत से शिव मन्दिरों में जलहरी में शिवजी का चार मुँह वाला सर स्थापित करके पूजा जाता है, पता नहीं शिवजी का बाकी सम्पूर्ण धड़ पार्वती के गुप्ताङ्ग (जलहरी) में कब कैसे और क्यों समा गया, व सर ही उसके बाहर कैसे निकला रह गया? अथवा शङ्कर का सर काटकर जलहरी में किस विधान से स्थापित किया गया। इस विचित्र पहेली का कोई समाधान हमको तो अब तक मिला नहीं है। उस सङ्गमरमर की मूर्त्ति के पास बैठे गणेश जी, (पार्वती के विलक्षण पुत्र) माँ बाप की इस अजीब मजाक को देखते रहते

हैं। यदि पौराणिक शिवोपासक विद्वान् इस रहस्य का स्पष्टीकरण कर सकेंगे तो हम उनके कृतज्ञ होंगे।

इसी प्रकार की कुछ प्राचीन मूर्त्तियाँ मथुरा के अजायबघर में मौजूद हैं, जिनमें शिवलिङ्ग में शिवजी का मुँह बना हुआ है। यह मूर्त्तियाँ मध्यकाल में भारत में पूजी जाती रही हैं। पाठक इस बात पर हँसेंगे कि शिवलिङ्ग में शिवजी का मुँह बना देना कितने पागलपन की बात है, पर ये मूर्त्तियाँ इस बात की साक्षी हैं कि जनता को मूर्ख बनाने के लिए कारीगर ने जैसी भी मूर्त्ति बनाकर दे दी लोग उसे ही पूजने लगे। प्रमाणस्वरूप डाकोर जी व जगन्नाथ जी की बेतुकी काली कलूटी भद्दी तस्वीरें बाजार में बिकती हुई देखी जा सकती हैं, भोला हिन्दू उन्हें भी भगवान् का चित्र मानता है। बुतपरस्ती करने वालों की बुद्धि भी बुत जैसी जड़ हो जाती है। उपास्य के गुण उपासक में आते ही हैं। जड़ वस्तुओं की उपासना करने वाले जड़ होने ही चाहिए। आत्मा परमात्मा के बारे में किसी बात को सोचना और सत्यान्वेषण करना यह मूर्त्ति पूजकों की अक्ल में नहीं आ सकता। इसीलिए चाणक्य ने लिखा है—

मूर्त्तिपूजा कम अक्लों के लिए है

"प्रतिमा अल्पबुद्धिनाम्"।

—चाणक्यनीति अ० ४। श्लोक १९

अर्थात् मूर्त्तिपूजा अल्प बुद्धि वालों के लिए है। कम अक्ल वालों को लोग क्या समझते हैं, पाठक समझ लें।

पत्थर का लिङ्ग शूद्र पूजते हैं

शिवलिङ्गं तु शूद्राणाम्। —शिवपुराण विन्धेश्वर सं० १-१८

अर्थ—पत्थर का लिङ्ग शूद्रों के लिए है, शूद्र का अर्थ ही —मूर्ख होता है। द्विजातियों को और बुद्धिमानों को ये पत्थर के शिवलिङ्ग नहीं पूजने चाहिए, यह पुराण का स्पष्ट आदेश है।

मूर्ख लोग मूर्त्ति को ईश्वर समझते हैं

मृच्छिलाधातुदार्वादिमूर्तावीश्वरबुद्धयः ।
क्लिश्यन्ति तपसा मूढाः परां शान्ति न यान्ति ते॥

—महानिर्वाणान्तक

अर्थ—मूर्ख लोग मिट्टी, पत्थर, धातु अथवा लकड़ी की

मूर्त्तियों को ईश्वर समझते हैं। इनको कभी शान्ति प्राप्ति नहीं हो सकती है।

जलमय तीर्थ व मिट्टी के देवता नहीं होते

न ह्यम्मयानि तीर्थानि न देवता मृच्छिलामयाः।

—भागवत स्क० १०। अ० ८४। श्लोक ११

अर्थ—जलमय स्थान तीर्थ नहीं कहलाते मिट्टी और पत्थर की प्रतिमाएँ देवता नहीं होती हैं।

मूर्त्ति में पूज्यबुद्धि व जल में तीर्थ बुद्धि रखने वाले गधे हैं, भागवत की खुली घोषणा—

यस्यात्मबुद्धिः कुणपे त्रिधातुके।
स्वधीः कलत्रादिषु भौम इज्यधीः॥
यत्तीर्थबुद्धिः सलिले न कर्हिचित्।
जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखरः॥

—भागवत स्कन्द १०। अ० ८४। श्लोक १३

अर्थ—जो व्यक्ति इस शरीर को आत्मा समझता है, स्त्री पुत्रादि को अपना समझता है, मिट्टी, पत्थर, काष्ठ आदि से बनी मूर्त्तियों को इष्टदेव मानता है तथा जो जल को तीर्थ समझता है, वह मनुष्य होने पर भी पशुओं में नीचा गधा ही है (गधे के समान है)।

उपरोक्त चन्द प्रमाणों में हमने दिखाया है कि मूर्त्तिपूजा चाहे वह शिवलिङ्ग के रूप में हो और चाहे विष्णु आदि फर्जी देवताओं के रूप में हो, पीपल के पेड़ की हो या गङ्गा आदि की जलधारा की ही हो, अत्यन्त ही बुरी बात है। सनातन धर्म के मान्य ग्रन्थों में उसके निषेध के सैकड़ों प्रमाण भरे पड़े हैं, अतः समझदार लोगों को मूर्त्तिपूजा या शिवलिङ्ग पूजा की दूषित प्रथा का परित्याग कर देना चाहिए। मूर्त्तिपूजा का निराकरण उस समय तक नहीं होगा जब तक कि भारत में से हिन्दुओं के इन कल्पित विष्णु व शिव जैसे देवताओं के भ्रष्ट जीवन चरित्रों से जनता को अवगत नहीं कराया जायेगा। वैसे तो सारे ही देवताओं के चरित्र गन्दे हैं। वे देवता तो नहीं हैं, वरन् चरित्रों की दृष्टि से राक्षस ही सिद्ध होते हैं, परन्तु उन सब में ब्रह्मा, विष्णु व महादेव ये तीन जितने बड़े देवता माने गये हैं, पुराणों ने उनके चरित्र उतने ही अधिक खराब बताये हैं। यदि इन प्रमुख देवताओं को सनातन धर्म से निकाल

दिया जाए तो वर्तमान पौराणिक सनातन धर्म ही समाप्त हो जायेगा, क्योंकि सम्पूर्ण पौराणिक धर्म का पूर्ण आधार ये तीन ही मुख्य देवता हैं। हमारा मुख्य विषय यहाँ केवल शिवलिङ्ग पूजा पर लिखना है, अत: हम अन्य देवताओं के चरित्र के दिग्दर्शन की बात छोड़ते हैं। हमें तो यहाँ बताना है कि शङ्कर जैसे कल्पित विदेशी देवता की उपासना करने से किसी का कल्याण नहीं हो सकेगा। सदाचारी की उपासना से भक्त में सदाचार के भाव उदय होंगे और दुराचारी की भक्ति से जीवन में दुराचार के गन्दे परमाणु प्रवेश करेंगे। यह बात भी किसी-किसी पुराण बनाने वालों के दिमाग में घूम गई थी। इसीलिए पुराणों में निम्न व्यवस्थाएँ दी हैं।

शिवपूजकों के लिए व्यवस्था

ब्राह्मणः कुलजो विद्वान् भस्मधारी भवेद्यदि।
वर्जयेत्तादृशं देवि! मद्योच्छिष्टं घटं यथा॥

—पद्मपु० उ० खण्ड० अ० २५३ पूना व अ० २३५ कलकत्ता

अर्थ—यदि कोई कुलीन विद्वान् ब्राह्मण माथे पर भस्म आदि लगाए, जैसा कि शिव के भक्त लगाते हैं तो उसका ऐसे ही दर्शन करना चाहिए, जैसे शराब के भरे घड़े का।

त्रिपुण्ड्रधारी पतित होता है

त्रिपुण्ड्रं शूद्रकल्यानां शूद्राणां च विधीयते।
त्रिपुण्ड्रधारणाद्विप्रः पतितः स्यान्न संशयः॥ २०॥

—पद्मपु० उ० खण्ड अ० २५३ पूना व अ० २३५ कलकत्ता

अर्थ—जो कोई ब्राह्मण त्रिपुण्ड्र (शिव का तिलक) माथे पर धारण करता है, वह पतित हो जाता है, क्योंकि यह विधि केवल शूद्रों की है।

शिवभक्त पाखण्डी-भ्रष्ट तथा नरकगामी हैं, खुद शिवजी की घोषणा

देवानां हितार्थाय वृत्तिः पाखण्डिनां शुभा।
कपालचर्म भस्मास्थि धारणं तत्कृतं मया॥
ये मे मतमाश्रित्य चरन्ति पृथिवीतले।
सर्वधर्मैश्च रहिताः पश्यन्ति निरयं सदा॥

—पद्मपु० उ० खण्ड अ० २३३ पूना व अ० २३५ कलकत्ता,

अर्थ—शिवजी कहते हैं (घोषणा करते हैं) हे पार्वती! देवताओं

के हित के लिए कपाल, भस्म और अस्थि धारण करने वाली पाखण्डी लोगों की वृत्ति मैंने धारण की है, जो मेरे मत को ग्रहण करके पृथिवी पर आचरण करेंगे वे सारे धर्मों से भ्रष्ट होकर नरक को देखेंगे।

शिवलिङ्ग पूजकों को घोर दुःख मिलेगा

शम्भो पपात भुवि लिङ्गमिदं प्रसिद्धम्।
शापेन तेन च भृगोर्विपिने गतस्य॥
तं ये नराः भुवि भजन्ति कपालिनैतु।
तेषां सुखं कथमिहापि परत्र मातः॥

—देवीभागवत स्क० ५। अ० १९। श्लोक १९

अर्थ—जिस शिव का लिङ्ग भृगु के शाप से कटकर गिर पड़ा और जो हाथ में मनुष्यों की खोपड़ियों को रखता है, उस शिव की जो लोग उपासना करते हैं, उनको इस लोक और परलोक में कहीं सुख न मिलेगा।

ये फतवे हमारे नहीं हैं। सनातन धर्म के परम मान्य पुराणों के हैं। बात भी ठीक है। आज प्रकाश एवं ज्ञान-विज्ञान के युग में पढ़ा-लिखा हिन्दू धर्म के मामले में अन्धा बनकर पोप-पुजारी एवं पण्डित के पीछे चलता है। शिवलिङ्ग को हाथ जोड़ता है। उससे मन्नतें माँगता है। उसके लिए मन्दिर बनवाता है। जमीन आसमान के सारे भौतिक विज्ञान को समझने वाला वैज्ञानिक, कानून की बाल की खाल खींचने वाला वकील, व्यापार में भूमण्डल भर के हिसाब की जोड़-तोड़ लगाने वाला गणितज्ञ व्यापारी, समस्त शास्त्रों को घोटकर पी जाने वाला संस्कृत का सनातनी पण्डित, कठिन से कठिन मामलों को तय करने की सूक्ष्म बुद्धि रखने वाला न्यायाधीश इन पत्थर पुजारियों के हाथ सारी बुद्धि बेचकर शिवजी की मूत्रेन्द्रियों के सामने सर नवाता फिरता है। वह नहीं सोचता कि आखिर यह शङ्कर की मूत्रेन्द्रिय की नकल ही तो शिवलिङ्ग है, इसे पूजने से क्या मिलेगा। संसार का विद्वान् आकाश में उड़ने को हवाई जहाज बनाता है, चन्द्रमा व मङ्गल लोक में जाने को राकेट जहाज बना रहा है, अपार सागर की छाती पर जहाज दौड़ाता है, रेडियो टेलिविजन के आविष्कार करता है, संसार में वैज्ञानिक आविष्कारों के बल पर व्यापारिक व सैनिक साम्राज्य स्थापित करता है, अपने देश की जनता को

समृद्ध बनाता है और मानवजाति की उन्नति का यत्न करता है। पर हमारा हिन्दू समाज महादेव के पत्थर के लिङ्ग को पानी से रगड़-रगड़ कर धोने में ही अपनी खोपड़ी खपाता रहता है। **इस भोले हिन्दू को इस बात की कोई चिन्ता नहीं है कि इसके इन्हीं पाखण्डों के कारण ११ करोड़ हिन्दू मुसलमान बन गया, एक करोड़ ईसाई हो गया, चालीस लाख सिक्खों में चला गया, २० लाख जैनी हो गया, लाखों अछूत कहा जाने वाला दलितवर्ग अब बौद्ध बना जा रहा है। नीलकण्ठ शास्त्री जैसे लाखों शिक्षित हिन्दू लिङ्गपूजा के पाखण्डों के कारण हिन्दू धर्म से घृणा होने से विधर्मी बन गये। पढ़ा लिखा शिक्षित नौजवान इन्हीं गन्दी बातों के कारण ईश्वर व धर्म से विमुख होकर घोर नास्तिक बनता जा रहा है।** पर इस भोले हिन्दू को न अपने घर की फिकर है न अपने समाज की। न उसे अपने स्वास्थ्य की चिन्ता है, न अपनी सन्तान को उन्नत बनाने की। न उसे सत्यासत्य का विवेक करने की जरूरत है और न देश की अवनति उन्नति का उसे कुछ ध्यान है।

उसे यदि ध्यान है तो शिवलिङ्ग के लिए मन्दिर बनाने का है, धुन है तो हर समय यह कि शिवलिङ्ग पर जल छोड़ता रहे ताकि उस पत्थर के लिङ्ग में से ज्वालामुखी फिर न फूट निकले, जिससे सनातनी संसार में तबाही न आ जाए। बेलपत्र चढ़ाता है तो इसलिए कि शिवजी का वीर्य पुष्ट होता रहे। अरे पागल! तुझे शिव वीर्य से क्या करना है। पुष्ट हो या न हो। तुझे यदि पत्थर के लिङ्ग में ज्वालामुखी फूटने के भय का भूत हर समय घेरे रहता है तो क्यों नहीं उखाड़कर ऐसे लिङ्ग को किसी गहरे समुद्र, कुएँ, नदी या तालाब में डाल आता, जहाँ हर समय वह पानी से तर रहे और तेरी पानी चढ़ाने की मेहनत बच जाए। यदि तुझे गङ्गा प्यारी है तो इन शिवलिङ्गों को ले जाकर गङ्गा के बीच धारा में छोड़ आ और अपने बेशकीमत समय को प्रभु भक्ति में लगा। या देश व समाज की सेवा का कोई काम करने में लगा दे तो तेरा जीवन सफल होगा और देश समाज का कल्याण होगा। **इन शिव व विष्णु के मन्दिरों को गरीब बे घर-बार लोगों को रहने को दे दे ताकि गरीबों का भला हो और देश की मकानों की समस्या के हल होने में सहायता मिले। मन्दिर के नाम लगी जायदादों को शिक्षा संस्थाओं को दे दे, ताकि तेरे देश के**

लाखों गरीब बच्चे अज्ञानान्धकार से मुक्त होकर स्वतन्त्र देश के शिक्षित नागरिक बन सकें और इन सबका पुण्य हो, हे शिव के पुजारी! यही परोपकार तेरा लोक परलोक सुधार देंगे। तेरे लिए ईश्वर का ध्यान करने को कोई शोर गुल रहित एकान्त स्थान उपयुक्त होगा।

मेरी हिन्दू कौम! आँख खोलकर देख एक खुदा के मानने वालों ने संसार में साम्राज्य स्थापित कर लिये और खुदा ने उनकी मदद की। तुझे सदियों तक गुलाम बनाये रखा और तू सैकड़ों ईश्वर व देवी देवताओं के चक्कर में पड़ी पिटती रही। तू शिव के लिङ्ग को ही पकड़े बैठी रही और बुतपरस्ती ही तेरी सचमुच बरबादी का कारण हुई। सोमनाथ जैसे लाखों विशाल मन्दिर इसी शिवलिङ्ग पर अन्धविश्वास के कारण बरबाद हुए। सारा देश इन पण्डे पुजारियों के चक्कर में आकर देवताओं की मदद की आशा और विश्वास में बरबाद हो गया। जो देवता अपनी मूर्त्ति की रक्षा यवनों की मार से न कर सके, मन्दिरों में चोरों से जो देवता अपने गहनों और कपड़ों की रक्षा नहीं कर सकते, खाना, पानी और हवा के लिए जो देवता पुजारियों के मोहताज हैं, जो देवता, पुजारियों के द्वारा तालों में हर समय इसलिए बन्द (कैद) रखे जाते हैं कि उन्हें कोई चुरा न ले जाए या कुत्ते, बिल्ली उनको अपवित्र न कर दें, वे भी क्या देवता हैं? तुम्हें क्या देंगे? कभी सोचा करो। आखिर मनुष्य हो। तुमको प्रभु ने बुद्धि दी है कि हर काम सोच-समझ कर करो। **मनुष्य का अर्थ ही मननशील होता है। जरा तो अकल से काम लिया करो। मनुष्य जन्म बार-बार नहीं मिलता है। इसे अन्धविश्वासों में बरबाद कर देना बुद्धिमानों की बात नहीं है।**

क्या राम ने शिवलिङ्ग पूजा की थी?

जनता को भ्रम में डालने के लिए एक बेतुकी गल्प यह उड़ाई गई है कि मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र जी महाराज ने सेतुबन्ध रामेश्वर पर शिवलिङ्ग पूजा की थी तथा उसे स्थापित किया था, पर यह बात सर्वथा निराधार है। वाल्मीकि रामायण में जो राम का प्राचीनतम जीवन चरित्र है, इस प्रकार का कोई लेख नहीं है, जिससे इस गल्प का समर्थन हो सके। तस्वीरें छापने वाली फर्मों ने ऐसे चित्र अवश्य बनाकर बाजार में प्रचारित कर दिए हैं, जिनमें रामचन्द्र जी घड़े से शिवलिङ्ग पर जल की धार छोड़ते दिखाए

गये हैं, पर यह एक बड़ी शरारत की बात है। जिन अज्ञानियों ने राम के द्वारा शिवलिङ्ग पूजने की बात उड़ाई है, वे समझते हैं कि रामचन्द्रजी से शिवजी बड़े थे, राम के पूज्य परमात्मा थे। उन लोगों ने कभी अपने घर के मान्य ग्रन्थों को नहीं देखा है, जिनमें स्पष्ट लिखा है कि—

शङ्कर व पार्वती राम का चिन्तन करते हैं—

इदमेव सदा मे स्यान्मानसे रघुनन्दनः।
सर्वज्ञः शङ्करः साक्षात्पार्वत्या सहितः सदा॥५०॥

—अध्यात्म रामायण अरण्य का० सर्ग ९

श्री रामचन्द्र जी के स्वरूप का शङ्कर और पार्वती मन में सदा चिन्तन किया करते हैं।

शङ्कर द्वारा राम की स्तुति

अहं भवन्नामगुणान् कृतार्थो।
वसामि काश्यामनिशं भवान्या॥
मुमूर्षमाणस्य विमुक्तयेऽहम्।
दिशामि मन्त्रं तव राम नाम ॥६२॥

—अध्यात्म रामायण युद्ध का० सर्ग १५

रामचन्द्र जी के दर्शन से शिवजी तर गये

राम के राज्याभिषेक के अवसर पर शङ्कर ने राम की स्तुति करते हुए कहा—'प्रभो! आपके नामोच्चारण से कृतार्थ होकर मैं दिन रात पार्वती के साथ काशी में रहता हूँ और वहाँ मरणासन्न पुरुषों को उनके मोक्ष के लिए आपके तारने वाले मन्त्र 'राम नाम' का उपदेश किया करता हूँ।'

राघवः सर्वदेवानां पावनः पुरुषोत्तमः॥१२१॥
स्पृष्ट्वा दष्ट्वा तेनैव विमलाः शङ्करादयः॥१२२॥

—पद्मपुराण उ० खण्ड अ० २५५ कलकत्ता

अर्थ—सबसे पवित्र रामचन्द्र जी हैं, जिनके स्पर्श और दर्शन से शङ्करादि देवता निर्मल (पवित्र) हो गये।

इन श्लोकों में यह स्पष्टरूप से बताया है कि शङ्कर से रामचन्द्र जी का स्थान बहुत ऊँचा है। रामचन्द्र जी अति पवित्र हैं, शङ्कर अति अपवित्र हैं। शङ्कर जैसे न जाने कितने सनातन धर्मे

के पतित कल्पित देवता रामचन्द्र जी के दर्शन व स्पर्श व नाम जपने से तर गये पवित्र हो गये। जब पुराण ही राम के दर्शन व उन का नाम जपने से शङ्कर का पवित्र होना बताता है तो यह कहना मूर्खता नं० १ नहीं तो क्या है कि वह महान् राम उस पतित शङ्कर को भी नहीं वरन् उसके लिङ्ग की पूजा करते थे, उस पर जल चढ़ाते थे, पर कौन देखने वाला है। यही तो हमारे सनातन धर्म की पोल है कि जो चाहो वाहियात बात महापुरुषों के जीवन में घुसेड़ दो, उनके पवित्र निष्कलङ्क अति श्रेष्ठ जीवन चरित्रों को कलङ्कित करने के लिए किसी भी प्रकार की गन्दी बातें उनके बारे में उड़ा दो, उनकी चाहे जैसी स्वांगियों जैसी गन्दी तस्वीरें बनाकर जनता में प्रचारित करके अल्पज्ञ जनता में मिथ्या ज्ञान का (ढोङ्गवाजी का) प्रसार करो। मर्यादा पुरुषोत्तम महान् राम को बदनाम करने के लिए उन्हें भी 'शिवलिङ्ग' पूजक बताकर दुनिया में कलङ्कित करो।

अरे ओ पोप लोगो! तुमको बिल्कुल लाज नहीं रही और न तुमसे कोई कुछ कहने वाला है, हिन्दू धर्म इसलिए बदनाम हुआ और वैदिक धर्म इसीलिए इस हिन्दू धर्म के नाम से कलङ्कित हुआ है। कोई भी पढ़ा लिखा व्यक्ति यह देखने का यत्न नहीं करता है कि शिवलिङ्ग पूजा का असली स्वरूप क्या है ? वास्तविक बात यह है कि कुछ पुराणों ने व उनके भक्तों ने शिव की प्रशंसा में कुछ ऐसे पुलन्दे बाँधे हैं कि उनकी चकाचोंध में किसी को असलियत जानने की बात सूझती ही नहीं। आपको आश्चर्य होगा कि स्वराज्य मिलने पर प्रायः ९०० वर्ष के बाद सोमनाथ के भवन मन्दिर का पुनर्निर्माण कराया गया और उसमें फिर एक ऊँचा सा शिवलिङ्ग स्थापित किया तो भारत के सनातनधर्मी विचार के तत्कालीन राष्ट्रपति महामाननीय श्री डॉ० राजेन्द्रप्रसाद जी भी उसे सर नवाने पहुँचे थे। इससे सिद्ध है कि राजनीति के महान् पण्डित भी धर्म के मामले में जानकारी शून्य के बराबर रखते हैं और पण्डा पुजारियों का अन्धानुगमन करते हैं। बहुत कम लोग धर्म के विषय में सत्यासत्य का अन्वेषण करते हैं। बाजार में दो पैसे की हाण्डी खरीदते समय दस दुकानों पर देखते हैं कि कहीं फूटी तो नहीं है, किन्तु धर्म जिसका सम्बन्ध **'यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धि स धर्मः'। इस लोक में अभ्युत्थान एवं जीवन के अनन्तर अन्य जन्म के सुख और अन्त में निःश्रेयस (मोक्ष) से होता है,**

उसके बारे में इतनी लापरवाही बरतते हैं, यह कितने दुःख की बात है। जिनका जन्म जिस कुल में हो गया वह उस कुल में (तथाकथित) पैतृक धर्म से चिपटा रहना पसन्द करता है, चाहे वह कितनी ही रूढ़ियों से युक्त एवं गलत क्यों न हो।

दृष्टान्त के लिए शिवलिङ्ग पूजा को ही ले लीजिए। चन्द हजार वर्षों से लोग इस वाममार्गीय सभ्यता के आदर्श 'योनि लिङ्ग-पूजा' को करते चले आ रहे हैं। **पर कितने लोग इतिहास में ऐसे हुए हैं, जिन्होंने शैव मतानुयायी होते इस कुप्रथा के विरुद्ध आवाज उठाई है। वैष्णवों ने यदि शैवों की या शैवों ने वैष्णवों की निन्दा की है तो द्वेषवश की है। दोनों दल अपने चेलों का गिरोह बढ़ाने में प्रयत्नशील रहे हैं। भारत के गत ५ हजार वर्षों के लम्बे इतिहास में केवल एक सत्यान्वेषी आदर्श व्यक्ति दृष्टिगोचर होता है, जिसने कट्टर ब्राह्मण शैवकुल में जन्म लेकर इस कुप्रथा के वास्तविक स्वरूप को समझ कर सच्चे परमात्मा की खोज की और सारे संसार के मतमतान्तरों घनघोर घटाटोपों को नष्ट करके एक वेदोक्त परमात्मा के वास्तविक स्वरूप को संसार के सामने रखकर धर्म के विषय में मानव का मार्ग-प्रदर्शन किया है। वह महान् व्यक्ति युगस्रष्टा महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज थे,** जिन्होंने अद्वितीय विद्याबल, योगबल एवम् अजेय तर्कबल के सहारे मतमतान्तरों के अन्धकार को नष्ट करके अपने अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' के द्वारा मनुष्यों को सत्य बात समझने की बुद्धि प्रदान की। ऋषि दयानन्द जी महाराज द्वारा स्थापित आर्यसमाज धर्म के विषय में जनता को निरन्तर मार्ग प्रदर्शन करने में प्रयत्नशील है। **आवश्यकता इस बात की है कि पौराणिक बन्धु हठधर्मी छोड़कर आर्यसमाज की बात को सुनें, ऋषि के ग्रन्थों को पढ़ें, उस पर मनन करें और असत्य को छोड़कर सत्य को ग्रहण करें, जो कि मनुष्यता का धर्म है।**

शिवलिङ्ग पूजा का विधान भारत और उसकी आदर्श सभ्यता के लिए महान् कलङ्क है। यह पाठकों ने गत पृष्ठों में देखा है। अब हम एक प्रमाण पौराणिक शङ्कर के जुआ खेलने की घटना का और देते हैं, जिससे आपको पता लगेगा कि **भारत में सारे ही कुकर्मों का प्रचार इन पौराणिक देवताओं के गन्दे चरित्रों के कारण ही हुआ है, जिनका पुराणों में निर्लज्जतापूर्वक**

वर्णन किया है। सरकार को चाहिए कि राष्ट्र के चरित्र को सुरक्षित रखने के लिए इन दूषित पुराणों को जब्त कर ले।

नैतिक पतन की पराकाष्ठा

हमने पीछे दिखाया है कि 'लिङ्गपुराण' में शिवजी ने ब्रह्मा को अपने दाहिने अङ्ग (पसली) से पैदा हुआ बताया है, अर्थात् ब्रह्माजी शिवजी के बेटे हैं। संक्षिप्त स्कन्ध पुराण गीता प्रेस द्वारा प्रकाशित के पृष्ठ १७ पर लिखा है कि—

"ब्रह्माजी निरन्तर मणिमय शिवलिङ्ग का पूजन करते हैं।"

अगर शिव में जरा शरमोहया बाकी होती तो अपने खासुल्खास बेटे को ऐसा पाप कर्म अपने साथ करने से अवश्य ही रोक देते। हमारे विचार से इन दोनों पतित देवताओं में नैतिकता सर्वथा नहीं है।

शङ्कर का जूआ खेलना

शङ्करश्च भवानी च क्रीडजाद्यूतमास्थितौ।
भवान्याऽभ्यर्चिता लक्ष्मीः धेनुरूपेण संस्थिता॥ २५॥
गौर्य्या जित्वा पुरा शम्भुः नग्नो द्यूते विसर्जितः।
अतोऽयं शङ्करो दुखी गौरी नित्यं सुखे स्थिता॥ २२॥
पराजये विरुद्धं स्यात् प्रतिपद्युदितेरनो।
प्रातर्गोधनः पूज्यो द्यूतं रात्रौ समाचरेत्॥ २९॥

—पद्मपुराण उत्तर खं० अ० १२२ कलकत्ता

अर्थ—महादेव ने जूआ खेला था। पार्वती ने शङ्कर को जूये में पूरी तरह जीत लिया और उन्हें नङ्गा करके छोड़ दिया। इसलिए शङ्कर सदा दुःखी व पार्वती सदा सुखी रहती हैं। प्रतिपदा के दिन सूर्य निकलने पर पराजय विरुद्ध पड़ता है, अतः प्रातःकाल गोवर्धन पूजा करे और जूआ खेले।

जिस जूए के कारण महाभारत का विनाशकारी संग्राम हुआ, जिस जूए को सारा संसार बुरा कहता है, जिसके कारण नित्य हजारों घर बरबाद होते हैं तथा जिसका निषेध 'अक्षैर्मा दीव्यः' कहकर ऋग्वेद ने किया है। उसी जूए के प्रचार की आज्ञा पुराण दे रहा है, क्योंकि महादेव ने जूआ खेला और पुराण की व्यवस्था है, **अतः यह घृणित कर्म भी सनातन धर्म है।** जब देवता **कुकर्मों के प्रचारक होंगे तो अन्य भक्त जनता भी क्यों न उनके दुराचरणों का अनुगमन करेगी।** जैसा गुरु वैसा चेला

बनेंगे। जब पुराण जूए का आदेश दे रहा है तो भक्तों में क्यों न जूए का गन्दा प्रचार व्याप्त होगा। बाजार में शङ्कर व पार्वती के जूआ खेलते हुए चित्र बनाकर बेचे जाते हैं और भक्त लोग उनको खरीदकर आदर से घर ले जाते हैं, हमारे हिन्दू समाज में किस कदर मूर्खता धर्म के नाम पर छा रही है, यह देखकर दुःख होता है।

रावण द्वारा शिवलिङ्ग की पूजा

रावण ने वालुकामय शिवलिङ्ग की पूजा की थी, इस विषय में वाल्मीकि रामायण में एक वर्णन आता है, जिसे बहुधा शिवलिङ्ग पूजा के समर्थन में प्रस्तुत किया जाता है। हमारा कहना है कि वाल्मीकि रामायण में प्रारम्भ में ६५०० श्लोक थे। बाद को लोगों ने उसमें मिलावटें करके २४००० श्लोक कर दिए हैं। दक्षिण में रावण की ठीक वैसे ही पूजा की जाती है, जैसे उत्तर भारत में राम की की जाती है, शिवलिङ्ग की पूजा की कल्पना, प्रारम्भ व प्रचार दक्षिण भारत से हुआ, अतः वहाँ के लोगों ने रावण को शिवलिङ्ग पूजक बताकर इस कार्य का महत्त्व बढ़ाने के लिए बहुत बाद को वाल्मीकि रामायण में यह श्लोक प्रक्षिप्त जोड़ दिए हैं। यदि कोई इन्हें प्रक्षिप्त मानने को तैयार नहीं हो तो भी हमारा कहना है कि राक्षस लोग विषयी व दुराचारी होते हैं। रावण तो राक्षसेश्वर था, वह तो अत्यधिक दुराचारी व विषयी होना ही चाहिए था, यदि उसने लिङ्ग पूजा की हो तो भी उसका कार्य धर्म विषय में प्रमाणित व उचित नहीं माना जा सकता है और न उसका अनुकरण ही किया जाना चाहिए। शिवलिङ्ग पूजा के औचित्य में रावण का उदाहरण देना शिवलिङ्ग को रावणवंशीयों का राक्षसी कर्म स्पष्टतया स्वीकार करना है—

हनुमान् जी द्वारा शिवलिङ्ग पूजने की गप्प गीता प्रेस द्वारा प्रकाशित संक्षिप्त स्कन्द पुराण पृष्ठ १४४ पर लिखी है—

"तदनन्तर वायु पुत्र हनुमान् जी ने रामेश्वर के उत्तर भाग में भगवान् रामचन्द्र जी की आज्ञानुसार अपने द्वारा लाए गये शिवलिङ्ग को स्थापित किया।

पुराणों की सारी ही बातें बे सिर पैर की होती हैं। हनुमान् जी महाराज महान् योद्धा संस्कृत एवम् व्याकरण के महान् पण्डित थे, वे स्वयं साक्षात् विष्णु के अवतार (जैसा कि पुराण मानते हैं) भगवान् राम के सेवक थे, जिनके दर्शन व स्पर्श से शङ्कर जी

पवित्र हुए थे। भगवान् राम हर समय हनुमान् जी को प्राप्त थे तो फिर वे राम को छोड़कर शिवलिङ्ग काहे को पूजने बैठे थे। हनुमान् जी को भगवान् विष्णु (रामचन्द्र जी) से बढ़कर किस चीज की या सद्गति की आवश्यकता शेष थी, जिसके लिए वे शिवलिङ्ग जैसी दूषित चीज को पूजने या उसे स्थापित करने का पागलपन करते? क्या शिवलिङ्ग रामचन्द्र जी से भी अधिक महत्त्व रखता था? इसके अतिरिक्त जब महाभारत अनुशासन पर्व अ० १४ में स्पष्ट लिखा है (प्रमाण पीछे देखो) कि पुरुष चिह्न व शिवलिङ्ग में कोई अन्तर नहीं है। पुल्लिङ्ग होने से सारे ही मर्द शङ्कर हैं व स्त्री लिङ्ग होने से सारी ही स्त्रियाँ पार्वती हैं तो फिर अपने पुरुष चिह्न को छोड़कर पराया शरीर (शिवलिङ्ग) पूजने में या रुद्राभिषेक करने में कौन सी अक्लमन्दी की बात है। प्रत्येक पाठक इस पर गम्भीरता से विचार करें।''

राम के युग में मूर्त्तिपूजा नहीं थी

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से हमारी मान्यता है कि मूर्त्तिपूजा का विधान बौद्ध या जैन काल से भारत में प्रचलित हुआ है, किन्तु यदि विवशता में दुर्जनतोषन्याय से हम पुराण की ही बात थोड़ी देर को मान लें तो भी राम के युग (त्रेतायुग) में मूर्त्तिपूजा का विधान भारत में नहीं था। देखिए प्रमाण—

सत्येषु मानसी पूजा देवानां तृप्तिकारिणी।
त्रेतायां वह्निपूजा च यज्ञदानादिकक्रिया॥ ११॥
द्वापरे मूर्त्तिपूजा च देवानां वै प्रियङ्करी।
कलौ तु दारुणे प्राप्ते ब्रह्मपूजनमुत्तमम्॥ १२॥

—भविष्यपु० प्रतिसर्ग ३। अ० २२

अर्थ—सत्ययुग में मानसी पूजा देवों को प्रसन्न करने वाली थी त्रेता में यज्ञ व दान आदि मुख्य धर्म कार्य में, द्वापर में मूर्त्तिपूजा देवों को सन्तुष्ट करने वाली थी और घोर कलियुग में इन सब को छोड़कर केवल निराकार ब्रह्म की उपासना ही सर्वश्रेष्ठ विधि ईश्वर पूजा की है।

इससे सिद्ध है कि राम के त्रेता युग में मूर्त्ति पूजा नहीं की जाती थी व वर्तमान कलियुग में मूर्त्तिपूजा सनातन धर्म के अनुसार महापाप है, क्योंकि उनके शास्त्र के विरुद्ध है। अतः स्कन्द पुराण की हनुमान् जी द्वारा शिवलिङ्ग पूजा की बात उड़ाना खरी चण्डूखाने

की गप्प है।

अब शिवलिङ्ग पूजा के बारे में खुद शिवजी महाराज का चेले फाँसने के लिए ४२० का धोखे का बयान भी देखिए, भोली जनता को किस कदर पण्डितों द्वारा धर्म के नाम पर बेवकूफ बनाया जाता है।

शिवलिङ्ग पूजा के माहात्म्य व चेले फाँसने का जाल

बयान हलफी के साथ बजात खुद शिवजी फरमाते हैं कि—

१. जो मेरे लिङ्ग की स्थापना करता है और उसके लिए सुन्दर मन्दिर बनवाता है, वह कल्प भर मेरे लोक में निवास करता है।

२. जो मेरे मन्दिर में झाड़ू देता है और धूल मिट्टी आदि हटाकर शुद्ध करता है, वह सब रोगों से छूट जाता है।

३. अखण्ड बेलपत्रों से और भाँति-भाँति के पुष्पों से शिवलिङ्ग की पूजा करके एक लाख वर्षों तक स्वर्ग में निवास करता है।

४. देव मन्दिरों को चूने से पुतवाने वाले का शरीर दृढ़ होता है।

५. मैं (शङ्कर) शिवलिङ्ग को प्रणाम करने पर १५, उसे स्नान कराने पर २० तथा उसकी विधिपूर्वक पूजा करने पर १०० अपराधों को क्षमा कर देता हूँ।

—संक्षिप्त स्कन्द पुराण गीता प्रेस का पृष्ठ १०५

जब शङ्कर के कथनानुसार उसके लिङ्ग पूजने का इतना फल होता है तो उसके सारे शरीर को पूजने का कितना बड़ा फल न मिलता होगा। पौराणिक हकीम व डॉक्टरों को चाहिए कि सवेरे ही झाड़ू व डलिया लेकर शिवलिङ्ग वाले मन्दिर के द्वार पर बैठ जाया करें और हर सनातनी रोगी से मन्दिर में झाड़ू लगवाया करें। शिवजी का वचन है, सब रोगी अच्छे हो जाया करेंगे। कितना सस्ता नुस्खा है। **पौराणिको! बेलपत्रों को शिवलिङ्गों पर चढ़ाये जाओ और स्वर्गवासी हो जाओ। अब, तप, योग, वेदाध्ययन, ज्ञान-विज्ञान की तुम्हें कोई जरूरत नहीं। पढ़ने-लिखने पर धूल डालो, येन, केन, प्रकारेण पेट भरकर जीवन काट लो। अज्ञानी बने रहो और केवल शिवलिङ्ग पर बेलपत्र चढ़ाते रहो। दिनभर में २० बार रोज खूब पाप करो और शाम को केवल १ लोटा पानी शिवलिङ्ग पर चढ़ाते रहो, बस सीधा स्वर्ग का तुम्हें टिकट मिल जायेगा। शिवजी ने तुम्हें स्वर्ग भेजने की गारण्टी कर दी है। यही तो तुम चाहते हो,** तुम्हारे पाखण्डी

पुराण व उनके प्रचारक पोप लोगों की दृष्टि में सारे वेद शास्त्र उपनिषद् दर्शन गलत रहे सदाचार पवित्र जीवन, उच्च चरित्र श्रेष्ठ शिक्षा-दीक्षा सब व्यर्थ हैं। उनकी निगाह में सारे ऋषि-मुनि अज्ञानी रहे, जो इतना सस्ता नुस्खा न बता सके। सनातन धर्मी संस्था वालो! यदि तुम इन बातों पर विश्वास करते हो तो सब मिलकर भारत सरकार से एक कानून बनवा लो कि शिवलिङ्ग पर जल छोड़ने वालों के ६० गुनाह माफ फरमाए जाएँ, जब तुम्हारा शङ्कर जैसा फर्जी देवता गुनाह माफ कर देता है तो सरकार को भी कानून बनाने में अड़चन न होगी, देश के सारे गुनहगार तब तुम्हारे गिरोह में भर्ती हो जाएँगे और पौराणिक पण्डितों की आमदनी खूब बढ़ जाएगी और यदि तुम्हें इन गप्पों पर विश्वास नहीं है तो कलकत्ता, बम्बई, गोरखपुर व मथुरा वालों से कहो कि वह पुराणों का घासलेटी साहित्य छापकर अन्धविश्वासी भारतीय जनता में प्रचारित करके उसे धर्म के नाम पर गलत मार्ग पर डालने का कार्य न करें।

वास्तव में ऐसे ही मूर्खतापूर्ण प्रलोभन दे-देकर व ईश्वर के स्थान पर कङ्कड़, पत्थर पुजवा कर हमारी धर्म ज्ञान से शून्य हिन्दू जनता को स्वार्थी लोगों, पाखण्ड प्रसार की ठेकेदार संस्थाओं व पुराणों ने मध्ययुग से आज तक बेवकूफ बनाया है और उसे खूब लूटा खाया है। इसी प्रकार का प्रभाव है कि आज भी इस प्रकाश एवं ज्ञान-विज्ञान के युग में पौराणिक भोला हिन्दू शिवलिङ्ग की बट्टी को दक्षिण के लिङ्गायत सम्प्रदाय की तरह गले में बाँधे फिरता है और अपनी खोपड़ी उससे रगड़ता है, न जाने मेरी इस भोली हिन्दू कौम को कब अक्ल आएगी।

राजनैतिक दृष्टि से भारतीय हिन्दू मङ्गोल, हूण, शक यूनानी यवन, अंग्रेज, फ्रान्सीसी व पुर्तगाल वालों की गुलामी में सदियों से पीसा जाता रहा है और धार्मिक गुलामी में इस जमीन से २० अरब मील ऊपर आकाश में बैठे फर्जी शिव को अपनी खोपड़ी बेच चुका है व उसके त्रिशूल के डर के मारे उसके शिवलिङ्ग को पूजता रहता है. दिन रात उसकी खुशामद में लगा रहता है। मेरे देश का कैसा दुर्भाग्य है कि चिरकाल से भारत की इस पवित्र भूमि पर व इसके रहने वालों के दिमागों पर विदेशियों का अधिकार रहा है। हमारा देश तो लम्बे संघर्षों के बाद स्वतन्त्र हो चुका, देश की भूमि पर से विदेशी शासन हट चुका, पर पौराणिक

हिन्दुओं की खोपड़ियों में से फर्जी परदेशी देवता शिव के भय का भूत न निकल सका। आज भी इन विदेशी देवताओं की गुलामी की निशानियाँ शिवलिङ्ग व विष्णु के मन्दिरों के रूप में हमारे स्वतन्त्र देश की जमीन पर कलङ्क स्वरूप विद्यमान हैं। क्या हम आशा करें कि अपने पवित्र भारत देश की भूमि पर से यह बौद्धिक पराधीनता के अपमानजनक चिह्न, व विदेशी देवों की मूर्त्तियाँ जल्द दूर करदी जाएगी ताकि पूर्णांश में भारत के हम नागरिक विश्व में सर्वथा स्वतन्त्र व्यक्ति के रूप में गर्व के साथ अपना मस्तक ऊँचा कर सकें।

संसार के देशभक्त लोगों ने अपने देश के महापुरुषों को अपनी पूजा का आधार बनाया है। मुसलमानों ने अपने देश के महापुरुष मोहम्मद को खुदा का पैगम्बर माना, यूरोप वालों ने ईसा को साक्षात् खुदा का बेटा मानकर उपासना की। ये सभी महापुरुष उनके देशवासी थे, परन्तु पौराणिक हिन्दू ने अपना उपास्य देव ऐसों को माना जो उसके देश के तो क्या कभी उनकी जमीन के भी निवासी नहीं रहे। **इन विदेशी शिव, गणेश व विष्णु आदि देवताओं के भक्त सदा इसीलिए गैरों की मार खाते रहे कि इनको कभी सर्वव्यापक जगदाधार परमेश्वर का विश्वास नहीं रहा।** परमात्मा से विमुख लोगों की दुर्दशा होनी चाहिए सदा विदेशियों ने उनकी वही दशा की। खेद है, कि अब भी इन अन्धविश्वासी धर्म भक्त भोले हिन्दुओं को समझ नहीं आती है। आर्यसमाज सदा इनको सन्मार्ग का प्रदर्शन करता है, उसे ये लोग अपना शत्रु समझते हैं। मेरे भोले शिवलिङ्ग पूजक भक्तो! यदि तुम शिवलिङ्ग के स्थान पर अपने शरीर को पूजा करो सदा अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखो, जितना समय तुम शिवलिङ्ग पर पानी चढ़ाने में लगाते हो उतना समय अपने शरीर पर तेल मालिश करने में लगाओ। अपनी उपस्थेन्द्रिय पर शीतल जल की धारा छोड़ा करो तो तुम्हारा शरीर दृढ़ बनेगा। ब्रह्मचर्य की साधना होगी प्रमेह, स्वप्नदोष, शीघ्रपतन का नाश होगा। समस्त शरीर की व वीर्य कोष की गर्मी शान्त होगी। शरीर के समस्त रोग—जल-चिकित्सा विज्ञान के—'सिट्जबाथ' के अनुसार दूर होकर चित्त में स्फूर्ति उत्पन्न होगी। तुमने देखा होगा कि छोटे-छोटे बालकों को भारत की प्राचीन संस्कृति में पली हुई पुरानी माताएँ अपने पैरों पर बिठला कर उनकी उपस्थेन्द्रिय पर शीतल जल की धारा छोड़ती

Scanned by CamScanner

हैं, इससे उन बालक, बालिकाओं की गर्भकाल तक की गर्मी व रोग दूर होकर उनका शरीर फूलता चला आता है। ऐसे बालक बालिकाओं को कभी चेचक, सूखा, खसरा, मोतीझला, फोड़े-फुंसी आदि रोग नहीं होते। शरीर का समस्त विजातीय द्रव्य निकलकर उनकी काया सर्वथा निरोगी बन जाती है, जो नई रोशनी की स्त्रियाँ ऐसा नहीं करती हैं, उनके बालक सदा रोगी बने रहते हैं। इस विज्ञान के अनुसार यदि बड़ी उम्र के (स्त्री-पुरुष) भी इस क्रिया को करें तो वे पूर्ण स्वस्थ बन सकते हैं, इस विषय में विशेष ज्ञान प्राप्त करने के लिए जल-चिकित्सा के ग्रन्थ देखे जा सकते हैं।

—०—

उपसंहार

यहाँ तक हमने शिवजी के व्यक्तित्व एवम् चरित्र के सम्बन्ध में प्रकाश डाला है। उसे पढ़कर विचारशील विद्वान् यह देखेंगे कि आचरण की दृष्टि से पौराणिक शिवजी बहुत पतित व्यक्ति हैं। उनकी भक्ति करके उनके जीवनचरित्र का मनन करने तथा अनुगमन करने वाले व्यक्तियों पर शिवजी के दूषित कारनामों का प्रभाव पड़े बिना न रहेगा, इसके साथ ही एक बात और भी विचारणीय है और वह यह कि कोई व्यक्ति यदि संसार में स्वयं खराब चीज खाता है, खराब आचरण रखता है और वह समाज से पृथक् रहता है तो इससे संसार की कोई हानि नहीं होती है। केवल उन बुराइयों के कारण उस व्यक्ति का जीवन दूषित एवं कलङ्कित हो जाता है, उसका स्वभाव खराब हो जाने से वह व्यक्ति केवल अपनी ही हानि करने वाला होता है, पर यदि वही दूषित आचार-विचार एवं संस्कार वाला व्यक्ति समाज के मध्य में रहने लगे तथा दूसरे लोगों के ऊपर अपनी माया फैलाकर अथवा दूसरों को प्रेरणा देकर उन्हें भी अपने जैसा कुमार्गगामी बनाने लगे तो इससे सारे समाज की हानि होती है। यदि दुष्टाचारी व्यक्ति एक साधारणकोटि का होता है, तो उसका प्रभाव थोड़ा एवं निम्नकोटि के व्यक्तियों पर पड़ता है, पर यदि वह कोई उच्च पदस्थ शक्तिशाली, गिरोहबन्द व्यक्ति हो अथवा जनता द्वारा पूजनीय स्थिति का व्यक्ति अथवा देवता हो तो उसके निजी आचरणों का सारे समाज पर भयानक प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता है। उस पर भी जब वह स्वयं दुराचार के लिए दूसरों को प्रेरणा करके समाज में दुराचार फैलाने पर उतर आए तो वह बहुत ही खतरनाक सिद्ध हो सकता है।

जहाँ तक शङ्कर जी के व्यक्तिगत चरित्र एवं कार्यकलापों का सम्बन्ध है, हमें केवल यही कहने का अधिकार है कि वह अनुकरणीय एवम् उपासना के योग्य देवता नहीं सिद्ध होता है। हम यहाँ एक ऐसा प्रमाण हिन्दू धर्म की शैव शाखा के परममान्य शास्त्र शिवपुराण से उपस्थित करते हैं, जिसे पढ़कर प्रत्येक चौंक पड़ेगा और सोचने पर विवश होगा कि क्या यही वह शङ्कर महान्

देवता है, जिसकी भक्ति में हमारा हिन्दू समुदाय लाखों करोड़ों की संख्या में दिन रात व्यस्त रहकर आत्मकल्याण की भावना से तन्मय रहता है। हम समझते हैं कि पौराणिक शङ्कर का सत्यस्वरूप इस प्रमाण से सूर्य के प्रकाश के समान स्पष्ट हो जायेगा। आशा है कि हमें शैव शास्त्र में से सत्य के प्रकाश के लिए इस उदाहरण को ज्यों का त्यों उद्‌धृत करने के लिए क्षमा करेंगे। शिव पुराण उमा संहिता अ० ४ में लिखा है—

शिव की माया के चमत्कार

सनत्कुमार जी बोले, हे व्यास जी—

श‍ृणु व्यास महाबुद्धे शाङ्करीं सुखदां कथाम्।
यस्याः श्रवणमात्रेण शिवे भक्तिः प्रजायते॥ १७॥

अर्थ—शिवजी की सुखदायक कथा सुनो, जिसके सुनने मात्र से शिवजी में भक्ति उत्पन्न होती है।

शिवमायाप्रभावेणाभूद्धरिः काममोहितः।
परस्त्रीघर्षणं चरके बहुवारं मुनीश्वर॥ १७॥
इन्द्रस्त्रिदशपीभूत्वा गौतमस्त्रीविमोहितः।
पापं चकार दुष्टात्मा शापं प्राप मुनेस्तदा॥ १८॥
अग्निकोऽपि जगच्छ्रेष्टो मोहिताश्शैवमायया।
कामाधीनः कृतो गर्वात्ततस्तेनैव चोद्‌धृतः॥ १९॥
जगत्प्राणोऽपि गर्वेण मोहिताश्शिवमायया।
कामेन निर्जितो व्यासः चक्रेऽन्यस्त्रीरतिं पुरा॥ २०॥
चण्डरश्मिस्तु मार्तण्डो मोहिताश्शिवमायया।
कामाकुलो बभूवाशु दृष्ट्वाश्वीं हयरूपधृक्॥ २१॥
चन्द्रश्च मोहितश्शम्भोर्मायया कामसङ्कुलः।
गुरुपत्नीं जहाराथ युतस्तेनैव चोद्‌धृतः॥ २२॥
पूर्वन्तु मित्रावरुणौ घोरे तपसि संस्थितौ।
मोहितौ तावपि मुनी शिवमायाविमोहितौ॥ २३॥
उर्वशीं तरुणीं दृष्ट्वा कामुकौ तौ बभूवतुः।
मित्रः कुम्भे जहौ रेतो वरुणोऽपि तथा जले॥ २४॥
ततः कुम्भात्समुत्पन्नो वसिष्ठो मित्रसम्भवः।
—अगस्त्यो वरुणाज्जातो बडवाग्निसमद्युतिः॥ २५॥

अर्थ—हे मुनीश्वर! शिवजी की माया के प्रभाव से विष्णु ने काम में मोहित हो अनेक बार परस्त्रीप्रसङ्ग किया॥ १७॥ इन्द्र देवताओं के स्वामी ने गौतम की स्त्री पर मोहित हो पाप किया तो उस दुष्टात्मा ने गौतम का शाप पाया॥ १८॥ जगत् में श्रेष्ठ अग्नि भी शिव की माया से मोहित होने से गर्व से काम के वशीभूत हुए, फिर शिव ने ही उनका उद्धार किया॥ १९॥ हे व्यास जी! जगत् के प्राण विष्णु भी शिव की माया से मोहित होके काम के वशीभूत होने से परस्त्री में प्रेम करने लगे॥ २०॥ तीव्र किरणों वाले सूर्य भी शिव की माया से मोहित हो काम में व्याकुल होके घोड़ी को देखकर शीघ्र ही घोड़े का रूप धारण करने वाले हुए॥ २१॥ शिव की माया से मोहित हुए काम से व्याकुल चन्द्रमा ने भी गुरुपत्नीहरण किया और शिव ने ही उनका उद्धार किया॥ २२॥ पहले घोर तप में प्रवृत्त हुए मित्रावरुण नामक दोनों मुनियों ने भी शिव की माया से मोहित हो॥ २३॥ उर्वशी अप्सरा को देख वे दोनों काम से पीड़ित हुए। तब मित्र ने घड़े में अपना वीर्य छोड़ा और वरुण ने जल में छोड़ा॥ २४॥ तब उस कुम्भ से मित्र के पुत्र वशिष्ठ जी उत्पन्न हुए वरुण से बड़वानल के समान कान्ति वाले अगस्त्य जी उत्पन्न हुए॥ २५॥

दक्षश्च मोहितश्शम्भोर्मायया ब्रह्मणस्सुतः।
भ्रातृभिस्स भगिन्यां वै भोक्तुकामोऽभवत्पुरा॥ २६॥
ब्रह्मा च बहुवारं हि मोहितश्शिवमायया।
अभवद् भोक्तुकामश्च स्वसुतायां परासु च॥ २७॥
च्यवनोऽपि महायोगी मोहितश्शिवमायया।
सुकन्या विजह्रे स कामासक्तो बभूव ह॥ २८॥
कश्यपः शिवमायातो मोहितः कामसङ्कुलः।
ययाचे कन्यकां मोहाद्धन्वनो नृपतेः पुरा॥ २९॥
गरुडः शाण्डिलीं कन्यां नेतु कामस्सुमोहितः।
विज्ञातस्तु तया सद्यो दग्धपक्षो बभूव ह॥ ३०॥
विभाण्डको मुनिर्नारीं दृष्ट्वा कामवशं गतः।
ऋष्यश्रृङ्गसुतस्तस्य मृग्यां जातश्शिवाज्ञया॥ ३१॥
गौतमश्च मुनिश्शम्भोर्मायामोहितमानसः।
दृष्ट्वा शरद्वतीं नग्नां रराम क्षुभितस्तया॥ ३२॥

अर्थ—शिव की माया से मोहित ब्रह्मा के पुत्र दक्ष भी भाइयों सहित वाणी के साथ भोग करने की इच्छा वाले हुए॥ २६॥ ब्रह्माजी ने अनेक बार शिव की माया से मोहित हो आसक्त हुई अपनी पुत्रियों से भोग करने की इच्छा की थी॥ २७॥ शिव की माया से मोहित हुए महायोगी च्यवन ऋषि ने भी काम में आसक्त हो, अपनी कन्या में आसक्ति की॥ २८॥ शिव माया से मुग्ध हो कश्यप ने भी काम के वश में हो अज्ञान से धन्वा राजा की कन्या माँगी॥ २९॥ मुग्ध हुए वरुण ने भी शाण्डिली की कन्या लेने की इच्छा की, फिर उस कन्या को ज्ञात होने पर उनके पक्ष भस्म हो गये॥ ३०॥ विभाण्डक मुनि भी स्त्री को देखकर काम के वशीभूत हुए, ऋष्यशृङ्ग का पुत्र शिव की आज्ञा से हरिणी में पैदा हुए॥ ३१॥ शम्भु की माया से मुग्ध हुए गौतम मुनि ने भी शरद्वती को नग्न देख काम से व्याकुल हो उसके साथ रमण किया॥ ३२॥

रेतः स्कन्धं दधार स्वं द्रोण्यां चैव स तापसः।
तस्माच्च कलशाज्जातो द्रोणश्शस्त्रभृतां वरः॥ ३३॥
पराशरो महायोगी मोहितश्शिवमायया।
मत्स्योदर्य्यां च चिक्रीडे कुमार्यां दासकायया॥ ३४॥
विश्वामित्रो बभूवाथ मोहितश्शिवमायया।
रेमे मेनकया व्यासः वने कामवशं गतः॥ ३५॥
वसिष्ठेन विरोधं तु कृतवान्नष्टचेतनः ।
पुनः शिवप्रसादाच्च ब्राह्मणोऽभूत्स एवं वै॥ ३६॥
रावणो वैश्रवा कामी बभूव शिवमायया।
सीतां जहार कुबुद्धिस्तु मोहितो मृत्युमाप च॥ ३७॥
बृहस्पतिः मुनिवरो मोहितः शिवमायया।
भ्रातृपत्न्या वशी रेमे भारद्वाजस्ततोऽभवत्॥ ३८॥
इतिमायाप्रभावो हि शङ्करस्य महात्मनः॥ ३९॥

अर्थ—फिर उस तपस्वी ने निकले अपने वीर्य को दौने में रखा तो उस कलश से शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ द्रोणाचार्य उत्पन्न हुए॥ ३३॥ शिव की माया से मोहित हुए महायोगी पराशर ने दास की कन्या कुमारी मत्स्योदरी से विहार किया॥ ३४॥ विश्वामित्र ने शिव माया से मोहित होकर वन में मेनका से रमण किया॥ ३५॥ चेतनारहित हो, उन्होंने वशिष्ठ से विरोध किया फिर ये शिव के

प्रसाद से ब्राह्मण हुए॥ ३६॥ शिव माया के वश में रावण वैश्रवा ने कामी हो कुबुद्धि से सीता को हरण किया और वह मृत्यु को प्राप्त हुआ॥ ३७॥ शङ्कर की माया से मोहित हुए मुनि बृहस्पति ने काम के वश भ्राता की स्त्री से रमण किया और उससे भारद्वाज उत्पन्न हुए॥ ३८॥ सनत्कुमार बोले—हे व्यास जी! मैंने यह महात्मा शिवजी की माया का प्रभाव वर्णन किया है॥ ३९॥

यह वह कथा है जिसे सुनकर शिवजी में भक्ति उत्पन्न होने की बात कही गई है। समझदार व्यक्ति यह सोच सकता है कि इस कथा से शिवजी के प्रति भक्ति उत्पन्न होगी या उनके चरित्र, स्वभाव एवं भाव का कच्चा चिट्ठा जनता के सामने आ जायेगा, जिससे बुद्धिमानजन शिवजी से इसलिए नफरत करने लगेंगे कि कहीं शिवजी की माया से वे व्यभिचारी न बन जाएँ। यदि शिवजी की यही माया है, तब तो ऐसे व्यभिचार प्रचार के ठेकेदार का हैड क्वार्टर (मन्दिर) वैश्याओं के मुहल्लों में बनाना उचित होगा। ताकि वैश्याओं को कुछ तो लाभ हो।

हमने इस पुस्तक के गत पृष्ठों में शिव के चरित्र के चन्द नमूने देखे हैं तथा यह भी देखा कि शिवलिङ्ग की पूजा व्यभिचारी लोगों द्वारा किस आधार पर व क्यों देश में प्रचलित की गई है। सब से अन्त में हमने शिव माया के चमत्कार भी देखे हैं। इन सब को पढ़कर हम देख व समझ सकते हैं कि पुराणों के शिवजी कौन हैं? कैसे हैं? व उनकी उपासना करने से हानि होगी या लाभ होगा। शिवजी जमीन से प्रायः २० मील ऊपर कहीं रहते बताये गये हैं, जहाँ केवल औरतें ही रहती हैं। मर्द जो भी भक्ति करके वहां जाता है, वह भी औरत बन कर शिवजी की सेवा करता है। शिवजी कामिनीपाशों से नित्य बँधे रहते हैं। शिवलोक में असंख्य अप्सराएँ भोगने को रहती हैं। शिवजी की माया में जो भी फँसे वे सब व्यभिचारी बन गये, इसलिए शिव व पार्वती के भयानक रूप को देखकर हर व्यक्ति को उनका भक्त बनने से पहले १००-१०० बार सोच लेना चाहिए कि उनका रास्ता सही है या गलत। उसे व्यभिचार का मार्ग पसन्द है या सदाचार का। **हमारे अपने विचार से हर व्यक्ति को इन शिव आदि देवताओं के झमेले से बचकर एक ईश्वर की उपासना वैदिक विधि से करनी चाहिए।**

हमने यह पुस्तक सर्वसाधारण को शिवलिङ्ग पूजा की

वास्तविकता जताने को लिखी है। स्वतन्त्र भारत में सामाजिक दोषों को सरकार कानून बनाकर दूर कर रही है, धार्मिक दोषों व अन्धविश्वासों को दूर करना धार्मिक विद्वानों का काम है। यह काम धर्मनिरपेक्ष सरकार से नहीं होगा। महाभारत के बाद ५००० वर्ष से हमारे पवित्र वैदिक धर्मी समाज में स्वार्थी मतवादियों के विषैले गन्दे फोड़े चले आ रहे हैं। इनका आपरेशन करने और सत्य वैदिक धर्म को प्रचारित करना स्वाध्यायशील आर्य विद्वानों का कर्त्तव्य है। हमारे इस ग्रन्थ को पढ़कर शिवलिङ्ग पूजक ज्ञान प्राप्त करें। वे इस कुमार्ग को छोड़कर ईश्वरीय ज्ञान वेद के सत्य धर्म की शरण में आएँ और इन कल्पित देवी देवताओं के झमेले से बचकर एक सर्वव्यापक परमात्मा की भक्ति करना सीखें। यही हमारी प्रार्थना है।

ईश्वरोपासना का वैदिक प्रकार

अब अन्त में हम अपने पाठकों को ईश्वरोपासना का वैदिक प्रकार बताते हैं। मनुस्मृति के इस सम्बन्ध में निम्न आदेश हैं—

न तिष्ठति तु यः पूर्वां नोपास्ते यस्तु पश्चिमाम्।
स शूद्रवद् बहिष्कार्यः सर्वस्माद् द्विजकर्मणः॥१०३॥
अपां समीपे नियतो नैत्यकं विधिमास्थितः।
सावित्रीमप्यधीयीत गत्वारण्यं समाहितः॥१०४॥

—मनु० अ० २

अर्थ—जो प्रातःकाल की सन्ध्या न करे और सायं को भी न करे, उसका सम्पूर्ण द्विज कर्मों से शूद्र के समान बहिष्कार कर देना चाहिए॥१०३॥ जल के समीप एकाग्रचित्त से वन या एकान्त में वहीं जाकर सन्ध्या वन्दन, नित्य कर्म और गायत्री का जाप करें॥१०४॥ सन्ध्या का शब्दार्थ है, अच्छे प्रकार से प्रभु का ध्यान करना। इसके लिए प्रातः एवं सायंकाल के समय दोनों (दिन व रात्रि) सन्धिवेलाओं में किसी भी एकान्त जगह में, नदी के तट या वन में, नहा धोकर पवित्र स्थान में पवित्र जल से तीन आचमन करे। चोटी में गाँठ लगा लें ताकि ध्यान के समय बाल हवा से उड़कर चित्त को न बटाएँ। आचमन से गले व मुँह की शुद्धि हो जाती है, साधारण कफ आदि गले में हो तो दूर हो जाता है। इसके अतिरिक्त एक मनोवैज्ञानिक रहस्य और है। उपासक दाहिने हाथ की हथेली में आचमन के लिए जल लेता है। फिर 'शन्नोदेवी'

का आचमन मन्त्र पढ़ता है। उसकी दृष्टि जल पर होती है। वह दृढ़ संकल्पात्मक मन से भावना करता है कि "यह जल मुझको कल्याणकारी हो, मुझ को सुखों का दाता हो, सब ओर से मेरे ऊपर सुख की वर्षा करे, मैं सुखों व नीरोगता की प्राप्ति के लिए इस अमृत जल का पान करता हूँ।" तो उपासक की सङ्कल्पशक्ति हाथ की हथेली में प्रवाहित होकर व दृष्टिपथ द्वारा उस जल में प्रवेश करके उसको वास्तव में अमृत बना देती है और उसके शरीर पर वही प्रभाव होता है, जो भक्त मन्त्र द्वारा चाहता है। जिन लोगों ने मनोविज्ञान के ग्रन्थों को पढ़ा है, वे इस रहस्य को समझते हैं। इसके बाद बाएँ हाथ की हथेली में जल लेकर मार्जन मन्त्रों से आत्मा में पूर्ण विश्वास एवं सात्त्विक सङ्कल्पात्मक मन के साथ भिन्न-भिन्न अङ्गों पर जल छिड़के, जिससे शारीरिक आलस्य की निवृत्ति होती है और शरीर में स्फूर्ति उत्पन्न होती है। मन की एकाग्रता के निर्माताओं भू भुवः स्वः के प्राणायाम मन्त्र को मन में उच्चारण करते हुए प्राणायाम करे। उसके आगे ऋषि दयानन्द प्रणीत वैदिक सन्ध्या विधि के अनुसार ईश्वर को हृदय में सर्वव्यापक अनुभव करते हुए आँखें बन्द करके बाहरी जगत् से ध्यान को हटाकर प्रभु प्रेम में मग्न होकर ईश्वर का स्मरण करे। ईश्वर प्रार्थना के तीन अङ्ग हैं। **पहले मन को प्रभु में तल्लीन करने के लिए उसके गुणों का बार-बार वर्णन करे। इसे स्तुति कहते हैं। फिर अन्तःकरण में ऐसा अनुभव करे कि मैं और प्रभु एक हैं। प्रभु मेरे अन्दर समाया हुआ है, मुझमें और उसमें कोई दूरी नहीं है। प्रभु सर्वशक्तिमान् दयालु है। मेरे ऊपर सुखों की वर्षा कर रहा है, मैं ईश्वर से बल व सद्गुण प्राप्त कर रहा हूँ। इसे उपासना कहते हैं। उसी समय ईश्वर से उपासक प्रार्थना करे कि प्रभो! आप मुझे बल दें, बुद्धि देवें, मुझे ज्ञानवान् बनाएँ मेरे अमुक-अमुक कष्टों को दूर करें। उपासक दृढ़मन, शुद्ध सङ्कल्प एवं पूर्ण विश्वास से प्रार्थना करें। इसे तीसरा अङ्ग प्रार्थना कहते हैं।** जब तक स्थिरता पूर्वक मन लगे इसी प्रकार ईश्वर की स्तुति उपासना तथा प्रार्थना भक्त नित्य दोनों समय किया करें।

स्तुति से ईश्वर में प्रीति उत्पन्न होती है। उपासना से ईश्वर के गुण उपासक में आते हैं। प्रार्थना से चित्त का अहङ्कार दूर होकर मन में सौम्यता आती है। शुद्ध हृदय से की गई आवश्यक

प्रार्थना फलवती होती है। मनोबल दृढ़ होता है, शारीरिक एवं मानसिक दोष दूर होते हैं। प्रार्थना के लिए प्रायः ऊषाकाल के प्रारम्भ से लेकर सूर्योदय तक का समय होता है व सायंकाल को अस्त होते सूर्य के समय से तारागणों के दर्शन तक का समय सर्वोपयुक्त है। सूर्य के उदय अस्त होने की किरणें खुले शरीर पर पड़ने से रोगों का नाश करके स्वास्थ्य देती हैं। **सूर्योदय के पश्चात् व सूर्यास्त से पूर्व अग्निहोत्र का समय होता है।**

जो लोग इस वैदिक विधि से ईश्वर की स्तुति, उपासना व प्रार्थना नित्य किया करते हैं, वे सफल मनोरथ होते हैं। ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है। वह प्रभु अनन्त विश्व में एकरस व्याप्त है, सारे लोक-लोकान्तरों को धारण करता, रचता व प्रलयकर्त्ता है। सब मनुष्यों को उसी की उपासना करनी चाहिए। मिथ्या देवी देवताओं की, अनेक ईश्वरवाद की अथवा अवतारवाद की झूठी भ्रमपूर्ण कल्पनाएँ ईश्वर के सत्य स्वरूप को न समझने वाले अज्ञानियों ने की हैं। ये सब गलत हैं। वेद ईश्वरीय ज्ञान हैं, अतः वेदों के आधार से ही प्रभु की उपासना करना योग्य है।

ईश्वर की भक्ति करने के लिए न मन्दिर-मस्जिद या गिरिजाघरों की जरूरत है, न घण्टा घड़ियाल बजाने की। न मूर्त्ति की जरूरत है न ईश्वर से मिलाने को पीर, पैगम्बर देवता या अवताररूपी एजेण्टों (दलालों) की। जहाँ जी चाहे, जब जो चाहे, कहीं भी ध्यान को एकाग्र करके सच्चे प्रेमी भक्त की तरह ईश्वर के ध्यान में तन्मय हो सकता है। कोई आडम्बर करने ही आवश्यकता नहीं है। भक्त ध्यान करेगा अपने प्रभु से अपने दिल की बात कहेगा और प्रभु सर्वव्यापक घट-घटवासी होने से उसकी बात जानेगा और उसे यथा-साध्य पूरा करेगा।

आयुर्वेद में आदेश है 'ओम् क्रतो स्मर' अर्थात् 'हे कर्मशील मनुष्य! तू ओ३म् नाम से ईश्वर का स्मरण कर।' योगदर्शन कहता है 'तस्य वाचकः प्रणवः।' उस ईश्वर का नाम ओम् है। 'तज्जपस्तदर्थ-भावनम्।' उस ओम् के अर्थ का स्मरण करते हुए बार-बार मानसिक जाप करो। **बिना अर्थ को समझे कोरी तोता रटन्त बेकार होती है।** इन वैदिक आदर्शों के विपरीत किसी भी प्रकार

की मूर्त्तिपूजा या अन्य प्रकार के ईश्वर का ध्यान नहीं करना चाहिए।

मूर्त्तिपूजा के द्वारा ईश्वर का ध्यान अथवा आत्मा का मेल नहीं होता है। कारण कि उपासक की आत्मा तो शरीर में बन्द रहती है और ईश्वर के सर्वव्यापक होने से यह माना कि ईश्वर मूर्त्ति में भी व्यापक होता है, पर उस प्रभु से सान्निध्य स्थापित करने के लिए उससे उपासना (नैकट्य) प्राप्त करने के लिए जीवात्मा शरीर को छोड़कर मूर्त्ति में व्यापक ईश्वर से मिलने के लिए उसमें प्रवेश नहीं कर सकता है। **सच्ची उपासना ईश्वर व आत्मा मेल, अज्ञानता के परदे को दूर करने से उपासक के अन्तःकरण में ही सम्भव होती है। जहाँ कि दोनों ही व्याप्यरूप से वर्तमान रहते हैं। यह एक रहस्य है, जिसे मूर्त्तिपूजक भाई नहीं समझते हैं।**

यह विषय बहुत बड़ा है। इस पर एक स्वतन्त्र ग्रन्थ लिखा जा सकता है, परन्तु यहाँ हमें संक्षेप से ईश्वरोपासना का वैदिक प्रकार दर्शाना इष्ट था जो हमने ऊपर दिखाया है। केवल इतना ही पर्याप्त है। जो लोग विशेष जानना चाहें वे आर्य साहित्य के ग्रन्थों को देख सकते हैं और अपने ज्ञान का विस्तार कर सकते हैं। इस विषय में हमारी पुस्तक 'ईश्वरसिद्धि' को देखना उचित होगा।

—०—

परिशिष्ट

(इस पुस्तक के दूसरे संस्करण तक कुछ प्रमाण देने से रह गये थे, इस संस्करण में पाठकों, शास्त्रार्थी विद्वानों के लाभार्थ हम दे रहे हैं)

अनेक जिद्दी पौराणिक विद्वान् पुराणों के श्लोकों के अर्थ तोड़-मरोड़ कर शिवलिङ्ग को ज्योतिर्लिङ्ग तथा जलहरी को वेदी सिद्ध करने का कुप्रयास किया करते हैं और कहते हैं कि शिवजी ने दारुवन में जाकर ऋषि पत्नियों के साथ कोई व्यभिचार नहीं किया था वे केवल ऋषि पत्नियों की परीक्षार्थ वहाँ गये थे।

लिङ्ग शब्द का अर्थ पौराणिक लोग 'लयनाल्लिङ्गम्' अर्थात् जिसमें सारा विश्व लीन हो जाता है, उस परमात्मा को लिङ्ग कहते हैं, ऐसा कहते हैं। इसके पाखण्ड का भण्डाफोड़ करने के लिए यद्यपि यथेष्ट प्रमाण हमने इस ग्रन्थ में दिये हैं, विशेष प्रमाण हमने इस ग्रन्थ में दिए हैं, कुछ विशेष प्रमाण हम यहाँ और देते हैं, जिनको देखकर विपक्षी विद्वानों के मुँह बन्द हो जाएँगे।

शिवजी का ऋषि पत्नियों से व्यभिचार व मारपीट।

ऋषयः ऊचुः—

व्यभिचाररता भार्याः सन्त्याज्याः पतिनेरिताः ॥ २९ ॥
दृष्ट्वा व्यभिचरन्तीह ह्यस्माभिः पुरुषाधम ॥ ३१ ॥
ताडयाञ्चक्रिरे दण्डैर्लोष्ठिभिर्मुष्टिभिर्द्विजाः ॥ ३८ ॥
दृष्ट्वाचरन्त गिरिशं नग्नं विकृतिलक्षणम्।
प्रोचुरेतद्भवलिङ्गमुत्पाटय सुदुर्मते ॥ ३९ ॥
अस्माभिर्विविधाः शापाः प्रवृत्तास्ते पराहताः।
ताडितोऽस्माभिरत्यर्थं लिङ्ग विनिपातितम् ॥ ५४ ॥

—कूर्मपुराण उत्तरार्ध अ० ३८

ऋषियों ने कहा—हमने अपनी पतिव्रता पत्नियों को पुरुषाधम (महानीच) शिवजी के साथ व्यभिचार करते हुए देखा। हमने उस शिव को डण्डे, लोहे व लात घूसों से खूब पीटा। हमने शिव को

नङ्गा विकृत आकृति वाला देखकर उसे शाप दिया कि हे दुर्मति (मूर्ख) तेरी यह लिङ्गेन्द्रिय कटकर गिर पड़े। हमारे उन अनेक शापों से रतिकार्य के लिए जो लिङ्गेन्द्रिय होती है, वह कटकर गिर पड़ी।

उसी शिव मूत्रेन्द्रिय की पूजा का आदेश

ब्रह्मोवाच—

यद्दृष्टं भवता तस्य लिङ्गं भुवि निपातितम्।
तल्लिङ्गानुकृती शस्यं कृत्वा लिङ्गमनुत्तमम्॥ १॥
पूजयध्वं सपत्नीका सादरं च पुत्रसंयुता:॥ ३॥

—कूर्मपुराण उत्तरार्ध अ० ३९

ब्रह्माजी ने ऋषियों को आदेश दिया—तुमने जिस शिवलिङ्ग को काटकर पृथिवी पर पतित हुआ देखा है, उसी लिङ्गेन्द्रिय की आकृति का लिङ्ग बनाकर अपनी पत्नी व पुत्रों के साथ आदर से तुम लोग उसकी पूजा करो—

इन प्रमाणों से प्रकट है कि शिवजी ने दारुवन में जाकर ऋषि पत्नियों के साथ घमासान व्यभिचार किया था, जिस पर ऋषियों ने उनकी लात, घूसों व लाठी आदि से पिटाई की थी। क्रोधित होकर उन्होंने शिवजी के व्यभिचार के काम में आने वाले लिङ्ग को शाप देकर काटकर भूमि पर गिरा दिया था। शिवजी जब दारु वन में गये थे तो वे—

दिगम्बरोऽतितेजस्वी भूतिभूपणविभूषित:।
सचेष्टां सदक्षां च हस्ते लिङ्गं विधारयन्॥ १०॥

—शिवपुराण कोटि रुद्रसं० अ० १२

देह पर भस्म रमाये सुन्दर तेजस्वी वेष बनाकर तथा अपनी लिङ्गेन्द्रिय को हाथ में पकड़े हुए वहाँ गये थे। वहाँ जाकर उन्होंने माया फैलाकर स्त्रियों को मोहित कामोत्तेजित कर दिया था।

योऽनन्त: पुरुषो योनिर्लोकानामव्ययो हरि:।
स्त्रीलयं विष्णुरास्थाय सोऽनुगच्छति शूलिनम्॥ ९॥
पूर्णचन्द्रवदनं पीनोन्नतपयोधरम् ।
शुचिस्मितं सुप्रसन्नं रणन् नूपुरकद्वयम्॥ १०॥
सुपीतवसनं दिव्यं श्यामलञ्चारुलोचनम्।
उदारसगमनं विलासि सुमनोहरम् ॥ ११॥

एवं स भगवानीशो देवदारुवनं हरः ।
चचार हरिणा सार्द्धं मायया मोहयञ्चगत्॥ १२॥
दृष्ट्वा चरन्तं विश्वेशं तत्र तत्र पिनाकिनम्।
मायया मोहिता नार्यो देवसमं मन्युः॥ १३॥
विस्त्रस्ताभरणाः सर्वांस्त्यक्त्वा लज्जां पतिव्रता।
सहैव तेन कामार्ता विलासिन्यश्चरन्ति हि॥ १४॥
ऋषीणां पुत्रका ये स्युर्युवानो जितमानसाः।
अन्वागमन्हृषीकेशं सर्वे कामप्रपीडिताः॥ १५॥

—कूर्मपुराण उत्तरार्ध अ० ३८

अर्थ—शिवजी स्वयं तथा विष्णु को सुन्दर औरत बनाकर दारुवन में गये। विष्णु जी का (स्त्री वेष में) चन्द्रमा जैसा सुन्दर मुख था, छातियाँ खूब उठी हुई थीं, देखने में बड़ी खूबसूरत प्रसन्न वदन, पैरों मैं नूपुरों की झन्कार करते हुए पीले वस्त्र पहने, कजरारे चञ्चल नेत्र हँस की सी मस्त, मन को हर लेनेवाली, चाल से वहाँ गये। वहाँ शिव जी व विष्णु को इन वेषों में विचरते देखकर उनकी माया से स्त्रियाँ मोहित हो गईं। उन्होंने अपने आभूषण व वस्त्र उतारकर फेंक दिये, लज्जा त्याग दी और कामातुर होकर शिवजी के पास गईं, ऋषियों के पुत्र भी कामातुर होकर विष्णु (स्त्रीरूपी विष्णु) से जाकर भिड़ गये।

उक्त सारे विवरण से स्पष्ट है कि विष्णु ने ऋषि पुत्रों से अपने साथ व्यभिचार कराया तथा शिवजी ने ऋषि पत्नियों से स्वयं व्यभिचार किया था। शिवजी का व्यभिचार करना व उनकी मूत्रेन्द्रिय का कट कर गिरना तथा उसी की नकल बनाकर पूजी जाने वाली वर्तमान शिवलिङ्ग का मूत्रेन्द्रिय होना यह सब पूर्णतया सिद्ध है—

शिव उपस्थेन्द्रिय का लिङ्ग नाम पड़ने का कारण

दारुवन में व्यभिचार करने पर मुनियों ने शिव को निम्न शब्दों में शाप दिया—

यस्मात्कलत्रहर्ता त्वं तस्मात्षण्ढो भव त्वरम्।
एवं शप्तः स मुनिभिर्लिङ्गं तस्यापतद् भुवि।
भूमिं प्राप्तं च तल्लिङ्गं ववृधे तरसा महत्॥ २५॥
आवृत्य सप्त पातालान्क्षणाल्लिङ्गमधोर्ध्वतः।
व्याप्य पृथिवीं समग्रां च अन्तरिक्षं समावृणोत्॥ २६॥

स्वर्गात् समावृताः सर्वे स्वर्गात्तत् तमथाभवत्।
न मही न च दिक्चक्रं न तोयं न च पावकः॥ २७॥
न च वायुर्नवाऽऽकाशं नाहङ्कारो न वा महत्।
न चाव्यक्तं न कालश्च न महा प्रकृतिस्तथा॥ २८॥
नासीदद्वैतविभागं च सर्वालीनं च तत्क्षणात्।
यस्माल्लीनं जगत्सर्वं तस्मिल्लिङ्गे महात्मनः॥ २९॥
लयनाल्लिङ्गमत्येयं प्रवदन्ति मनीषिणः॥ ३०॥

—स्कन्दपु० माहेश्वर खण्ड अ० ६

अर्थ—'क्योंकि तुमने हमारी पत्नियों को भ्रष्ट व हरण किया है, अतः 'षण्ढ', अर्थात् हिजड़े (लिङ्गहीन) हो जाओ।' मुनियों के इस प्रकार शाप देते ही शिव का लिङ्ग (उपस्थेन्द्रिय) कटकर पृथिवी पर गिर पड़ी। भूमि पर गिरते ही वह अत्यन्त बढ़ गई। उसने सात पाताल तथा ऊपर के लोक एक क्षण में ढक लिये। सारी पृथिवी, आकाश, स्वर्ग सभी उससे ढक गये। वह स्वर्ग से भी ऊपर तक बढ़ गई, पृथिवी, दिशाएँ, जल, अग्नि, वायु, आकाश, अहङ्कार, महत्तत्व, अव्यक्त, काल, महाप्रकृति, परमाणु एवं सारे लोक उससे आवृत्त हो गये। कुछ भी शेष नहीं बच सका, क्योंकि शिव की उस कटी हुई उपस्थेन्द्रिय ने सारे जगत् को अपने में लीन कर लिया, अतः महात्मा शिव की उस उपस्थेन्द्रिय को ही 'लिङ्ग' कहा जाने लगा। विद्वान् लोग कहते हैं कि जिसमें सब कुछ लीन हो जाए उसे लिङ्ग कहते हैं।

इस प्रमाण से यह प्रमाणित है कि शिवलिङ्ग शब्द शिव की उपस्थेन्द्रिय का ही वाचक है। शिवजी को 'षण्ढ', अर्थात् लिङ्गहीन शब्द भी बड़े महत्त्व का प्रयुक्त किया गया है। उससे भी शिवलिङ्ग को अन्य कुछ नहीं बताया जा सकता है। इसी सिलसिले में आगे के श्लोकों में स्पष्ट किया गया है कि शिवलिङ्ग को ज्योतिर्लिङ्ग बताना भी मूर्खता की बात है।

जब शिव के उस कटे हुए लिङ्ग का विस्तार बहुत हो गया तो देवताओं ने विष्णु व ब्रह्मा ने उसकी लम्बाई का पता लगाने को कहा—

देवा ऊचुः—

अस्य मूलं त्वया विष्णो! पद्मोद्भव! च मस्तकम्।
युवाभ्यां च विलोक्यं स्यात्स्थाने स्यात्परिपालकौ॥ ३३॥

श्रुत्वा तु तौ महाभागौ वैकुण्ठकमलोद्भवौ।
विष्णुर्गतो हि पातालं ब्रह्मा स्वर्गं जगाम ह॥ ३४॥
स्वर्गं गतस्तदा ब्रह्मा अवलोकनतत्परः।
नापश्यत्तत्र लिङ्गस्य मस्तकं च विचक्षणः॥ ३५॥

—स्कन्दपु० माहेश्वर खण्ड अ० ७

देवताओं ने कहा—विष्णु तुम इस लिङ्ग की लम्बाई का पता लगाने नीचे की ओर जाओ तथा ब्रह्माजी! तुम ऊपर की ओर जाओ, विष्णु पाताल की ओर गये और ब्रह्मा ऊपर स्वर्ग की ओर गये, लेकिन ब्रह्मा को कहीं भी उसका अन्त न दिखाई दिया।

इसी कथा में दिया है कि विष्णु ने नीचे से लौटकर बताया कि उनको लिङ्गेन्द्रिय का अन्त नहीं मिला। ब्रह्मा ने ऊपर से लौटकर झूठ बोला कि उनको अन्त मिल गया और गवाही में केतकी का फूल पेश कर दिया, इस झूँठ से केतकी फूल व ब्रह्मा को शाप दिये गये।

यही कथा अन्य पुराणों में भिन्न प्रकार से दी गई है। वहाँ लिखा है कि ब्रह्मा व विष्णु में एक दिन विवाद उठ खड़ा हुआ कि दोनों में कौन बड़ा है। दोनों ही अपने को बड़ा बताते थे। उसी समय उनके बीच में एक लिङ्ग प्रकट हो गया। वहाँ यह निश्चय हुआ कि जो भी इस लिङ्ग के सिर का पता लगा लाये, वही बड़ा माना जायेगा। तदनुसार विष्णुजी नीचे को व ब्रह्मा ऊपर को गये। इसके आगे की कथा एक समान है, पौराणिक विद्वान् उस लिङ्ग को 'ज्योतिर्लिङ्ग' बताकर धोखा दिया करते हैं। स्कन्ध पुराण सभी पुराणों में सबसे बड़ा व माननीय पुराण है। उसमें ऊपर के प्रमाणों के आधार पर डङ्के की चोट यह घोषणा कर दी है कि शिवलिङ्ग शिव की मूत्रेन्द्रिय ही थी। उसे अन्य कुछ भी बताने वाले कोरे जालसाज हैं। वे पुराणों को देखते ही नहीं हैं, केवल उत्तर देने के लिए उल्टे सीधे अर्थ भिड़ाया करते हैं।

हम सनातन धर्म के विद्वान् द्वारा शिवलिङ्ग पूजा के समर्थन में लिखे गये लेख को उद्धृत करते हैं, जो काफी मनोरञ्जक है—

दिल्ली के एक पौराणिक विद्वान् ने 'सनातन धर्मालोक' नाम से अपनी एक ग्रन्थमाला निकाली है, उसके खण्ड ६ में पृ० ६५३ पर वह हमारी पुस्तक शिवलिङ्ग पूजा क्यों? के सम्बन्ध में लिखते हैं—

"जो कि वादी लिखते हैं—परमात्मा के स्थान पर महादेव का लिङ्ग (मूत्रेन्द्रिय) जनता से पूजवा डाला तो क्या वादी महादेव के सर की पूजा करेंगे—यदि हम इसकी आज्ञा दे दें? क्या वादी लिङ्ग का अर्थ केवल शिश्न ही जानते हैं? महादेव महान् देव परमात्मा ही तो हैं, उनका लिङ्ग ब्रह्माण्ड का प्रतीक है...अथवा शिवलिङ्ग तथा जलहरी को पार्वती को पार्वती का 'भग' भी आप लोगों के अनुसार मान लिया जाए और उनके पूजनीय होने में शङ्का की जाए तो उस पर वादी यह जाने कि—"जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ" गौरीशङ्कर परमात्मा होने से जगत् के जननी (माता) जनक (पिता) हैं। जननी जनक को पूजनीय कौन नहीं मानता? वादी भी तो माता पिता को पूजनीय मानते हैं। (देखिए० स० प्र० का पञ्चायतन देव पूजा प्रकरण) ऐसा है तो उनकी पूजा किसी अङ्ग के द्वारा ही तो होगी। बताइए कि पिता का जनकत्व वस्तुतः किस अङ्ग में होता है? और माता का जननीत्व वस्तुतः किस अङ्ग में होता है? आपका उत्तर भी सही लगा कि यही दो अङ्ग भग-लिङ्ग ही वस्तुतः जननी-जनक हैं। तब माता पिता को यदि पूजनीय माना जाता है और उनकी पूजा उनके किसी अङ्ग की पूजा से होती है तो उनकी वास्तविक पूजा उन्हीं अङ्गों की पूजा से सम्पन्न होगी। पर प्राकृतिक शरीर होने से अपवित्रतावश लोक में इन अङ्गों की पूजा व्यवहार में नहीं होती, अतः नहीं की जाती। पर जगत् के जननी जनक पार्वती परमेश्वर पवित्र देवता होने से उनके यह दोनों अङ्ग भी पवित्र हैं, अतः उनकी पूजा में भी न तो कोई दोष है और न उपहासनीयता यहाँ लिङ्ग योनि अङ्गों में लज्जा मानी जाती है, अन्यत्र नहीं। इस प्रकार देवताओं के अङ्ग कहाँ नहीं हैं? सर्वत्र हैं, पर उनके इन अङ्गों में भी कुछ उपहासनीयता व लज्जा की बात नहीं, क्योंकि वे मनुष्य नहीं हैं।"

उपरोक्त लेख से स्पष्ट है कि पौराणिक विद्वान् भी शिवलिङ्ग को महादेव की मूत्रेन्द्रिय तथा जलहरी को पार्वती का भग स्वीकार करते हैं। वे तो यहाँ तक आगे बढ़ गये हैं कि सन्तान को माता पिता की पूजा उनकी मूत्रेन्द्रियों की पूजा करके ही उनकी वास्तविक पूजा करने का आदेश दे रहे हैं। हमारा निवेदन है कि वे पौराणिक सन्तानों को माता पिता की रोली चावल चढ़ाकर मूत्रेन्द्रिय पूजा करने की कोई पुराण समर्थित शास्त्रीय पद्धति बनवाकर छपवा दें

तो सनातनी लोग उनके अति कृतज्ञ होंगे।

सनातनी विद्वानों के तर्कों का यह एक और दृष्टान्त है।

अन्त में कामुक शिवजी की चतुर्मुखी मूर्त्ति का रहस्य भी पाठक देख लें जो कि मन्दिरों में पूजी जाती है।

शिवजी के चार मुँह

तिलोत्तमा नाम पुरा ब्राह्मणयोषिदुत्तमा।
तिलं तिलं समुद्धृत्य रत्नानां निर्मिता शुभा॥ १॥
यतो यतः सुदती मामुपाधावदन्तिके।
ततस्ततो मुखं चारु मम देवि विनिर्गतम्॥ ६॥
ता दिदृक्षुरहं योगाच्चातुर्मुर्तित्वमागतः।
चतुर्मुखश्च संवृत्तो दर्शयेन् योगमुत्तमम्॥ ४॥

—महाभारत अनु० अ० १४१

अर्थ—शिवजी ने कहा—पूर्वकाल में ब्रह्मा ने एक सर्वोत्तम नारी सृष्टि की थी। उन्होंने सम्पूर्ण रत्नों का तिल-तिल भर सार उद्धृत करके उस शुभ लक्षणा सुन्दरी के अङ्गों का निर्माण किया था। इसलिए वह तिलोत्तमा नाम से प्रसिद्ध हुई॥ १॥ वह सुन्दर दांतों वाली सुन्दरी निकट से मेरी परिक्रमा करती हुई जिस-जिस दिशा की ओर गई उस-उस दिशा की ओर मनोरम मुख प्रकट होता गया॥ ३॥ तिलोत्तमा के रूप को देखने की इच्छा से योगबल से मैं चतुर्मुख हो गया। इस प्रकार मैंने लोगों को उत्तमोत्तम योगशक्ति का दर्शन कराया।

समीक्षा—तिलोत्तमा नाम की सुन्दर स्त्री के रूप पर शिवजी इस कदर मोहित हो गये कि उनकी आँखें उस पर चिपक गईं। वह उनके चारों ओर जब घूमने लगी तो अन्य देवता लोग मजाक न बनाएँ, इसलिए उन्होंने सर घुमाकर उसे देखते रहने के बजाए अपने तीन तरफ तीन मुँह और बना लिये व उसके सौन्दर्य को तबियत भरकर देखते रहे। शिवजी की उसी कामातुर अवस्था में प्रकट हुए चार मुँह की नकल बनाकर चतुर्मुखी शिवजी की शिव मन्दिरों में आज भी पूजा होती है। यह शिवजी का रहस्य जब पाठकों पर प्रकट होगा तो वे इस पर हँसे बिना न रहेंगे। अपने ही पूज्य कामुक शिवजी की मजाक उड़ाने में पौराणिक विद्वानों ने कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी है।

आशा है इन प्रमाणों से सभी को स्थिति स्पष्ट हो जायेगी और वे समझ सकेंगे कि शिवलिङ्ग शिव मूत्रेन्द्रिय की नकल है। दारुवन में शिवजी ने व्यभिचार किया था। शिवलिङ्ग को ज्योतिर्लिङ्ग बताना गलत है तथा व्यभिचार के कारण शिवजी पर भारी मार पड़ी थी, यह भी पुराण ने स्पष्ट कर दिया है।

नोट—शिवलिङ्ग पूजा मूत्रेन्द्रिय की पूजा ही है, इसके समर्थन में हमने जैन मत समीक्षा पुस्तक से एक प्रमाण दिया है, जिसमें जैनियों ने भी मूत्रेन्द्रिय पूजा के समर्थन में एक कथा अपने धर्मशास्त्र में गढ़कर लिखी है। जो शिवलिङ्ग को मूत्रेन्द्रिय ही सिद्ध करती है।

—०—

Rajeshkumar V. Gambhava